धनी

धरमदासजी की शब्दावली

जीवन-चरित्र सहित

जिस मैं

उन महात्मा के अति कोमल पद मुख्य मुख्य अंगौं और रागौं मैं और उन का बारहमासा, पहाड़ा, नाम लीला और मुक्ति लीला छपी हैं .

और गूढ़ शब्दौं के अर्थ व संकेत नोट मैं लिख दिये गये हैं



इलाहाबाद
बेलवेडियर स्टीम प्रिंटिंग वर्क्स मैं प्रकाशित हुई ।
सन १९१२ ईस्वी

९८ पृष्ठ] [दाम ।=)

॥ संतबानी ॥

संतबानी पुस्तक-माला के छापने का अभिप्राय जक्त-प्रसिद्ध महात्माओं की बानी व उपदेश को जिन का लोप होता जाता है बचा लेने का है। अब तक जितनी बानियाँ हम ने छापी हैं उन में से विशेष तो पहिले छपी ही नहीं थीं और कोई २ जो छपी थीं तो ऐसे छिन्न भिन्न और बेजोड़ रूप में या छेपक त्रुटि और गलती से भरी हुई कि उन से पूरा लाभ नहीं उठ सकता था।

हम ने देश देशान्तर से बड़े परिश्रम और व्यय के साथ ऐसे हस्तलिखित दुर्लभ ग्रंथ या फुटकर शब्द जहाँ तक मिल सके असल या नक़ल कराके मँगवाये हैं और यह कार्रवाई बराबर जारी है। भर सक तो पूरे ग्रंथ मँगा कर छापे जाते हैं और फुटकर शब्दों की हालत में सर्व साधारन के उपकारक पद चुन लिये जाते हैं। कोई पुस्तक बिना कई लिपियों का मुक़ाबला किये और ठीक रीति से शोधे नहीं छापी जाती, ऐसा नहीं होता कि औरों के छापे हुए ग्रंथों की भाँति बेसमझे और बेजाँचे छाप दी जाय। लिपि के शोधने में प्रायः उन्हीं ग्रंथकार महात्मा के पंथ के जानकार अनुयायी से सहायता ली जाती है और शब्दों के चुनने में यह भी ध्यान रक्खा जाता है कि वह सर्व साधारन की रुचि के अनुसार और ऐसे मनोहर और हृदय-बेधक हों जिन से आँख हटाने का जी न चाहे और अंतःकरन शुद्ध हो।

कई बरस से यह पुस्तक-माला छप रही है और जो जो कसरें जान पड़ती हैं वह आगे के लिये दूर की जाती हैं। कठिन और अनूठे शब्दों के अर्थ और संकेत नोट में दे दिये जाते हैं। जिन महात्मा की बानी है उन का जीवन-चरित्र भी साथ ही छापा जाता है और जिन भक्तों और महापुरुषों के नाम किसी बानी में आये हैं उन के संछेप बृत्तांत और कौतुक फुट-नोट में लिख दिये जाते हैं।

पाठक महाशयों की सेवा में प्रार्थना है कि इस पुस्तक-माला के जो दोष उन की दृष्टि में आवें उन्हें हमको कृपा करके लिख भेजें जिस से वह दूसरे छापे में दूर कर दिये जावें और जो दुर्लभ ग्रंथ संतबानी के उनको मिलें उन्हें भेज कर इस परोपकार के काम में सहायता करें।

सूचीपत्र

धर्म्मदासजी का जीवन-चरित्र

धनी धर्म्मदासजी जाति के कसौंधन बनिये बांधोगढ़ नगर के भारी महाजन थे। उनके जीवन और मृत्यु के समय का उनके मत वालों या किसी ग्रंथ से ठीक ठीक पता नहीं चलता परन्तु इतना पक्का है कि कबीर साहेब से इनकी अवस्था कम थी और उनके पन्द्रह बीस बरस पीछे चोला छोड़ा। इस हिसाब से उनके जन्म का समय बिक्रमी सम्बत् १४७५ और १५०० के दर्मियान और परमधाम सिधारने का समय सम्बत् १६०० के क़रीब समझना चाहिये क्योंकि उन्होंने पूरी अवस्था को पहुँच कर शरीर त्याग किया।

धर्म्मदास जी बाल अवस्था ही से बड़े धर्म्मात्मा और भगवत भक्त थे परन्तु आदि में पुराने कर्म्म धर्म्म और मूर्त्ति पूजन के बँधुए थे। सैकड़ों पंडितों और पुजारियों और साधुओं की उनके यहाँ सदा भीड़ भाड़ लगी रहती थी और अपना मुख्य समय ठाकुर की मूरत और शालग्राम की पूजन और ब्राह्मणों और साधुवों के खिलाने पिलाने और आदर सत्कार और कथा कीर्त्तन में ख़र्च करते थे और दूर दूर के तीर्थों में दर्शन और यात्रा कर आये थे।

जब धर्म्मदास जी के चेताने का समय आया तब सतगुरु कबीर साहेब पहिले उनसे मथुरा में मिले और रास्ते में चरचा मूर्त्ति पूजन और तीर्थ ब्रत के खंडन और संत मत के मंडन की की। कुछ दिन पीछे धर्म्मदास जी काशी यात्रा को आये तब कबीर साहेब के फिर दर्शन मिले और जो कुछ संशय भर्म धर्म्मदास जी के मन में बाक़ी रह गये थे उनको कबीर साहेब ने पूरी भाँति मिटा दिया और इसके पीछे संत मत का उपदेश देकर दया दृष्टि से उनके घट के पट खोल दिये। "अमर सुख निधान" ग्रंथ में कबीर साहेब और धर्म्मदासजी की गोष्टी बिस्तार के साथ लिखी है—उसकी थोड़ी सी कड़ियाँ जिनमें धर्म्मदासजी के कबीर साहेब का दर्शन पाने और फिर काशी में शरण लेने का वर्णन है नीचे लिखे जाते हैं—

॥ रमैनी ॥

(जिन्द)

चौपाई—कहैं कबीर मैं काया सोधा। जो जस बूझि ताहि तस बोधा॥
अपने घट में कीन्ह विचारा। देखौं धरमदास दरबारा॥
धरमदास बंधो के बानी*। प्रेम प्रीति भक्ती मैं जानी॥
सालिगराम की सेवा करई। दया धरम बहुतै चित धरई॥
साधु भक्त के चरन पखारै। भोजन कराइ अस्तुति अनुसारै॥
भागवत गीता बहुत कहाई। प्रेम भक्ति रस पियै अघाई॥
मनसा वाचा भजै गोपाला। तिलक देइ तुलसी की माला॥
द्वारिका जगन्नाथ होइ आये। गया बनारस गंगा न्हाये॥
बोलत वचन सत्त सुभ बानी। वृथा कहै कबहूँ ना जानी॥

दोहा—राम कृष्ण को सुमिरे, तीरथ व्रत दृढ़ चेट†।
मथुरा परसत जब गये, भे कबीर सों भेंट॥

चौपाई—जिंद‡ रूप जब धरे सरीरा। धरमदास मिलि गये कबीरा॥
उदित वदन मुदित सुख चैना। हँस मुसुकाइ कहे मुख बैना॥
धरमदास तुम हौ बड़ ज्ञानी। परम भक्त भक्ती मैं जानी॥
तुम सा भक्त न देखौं आना। धर्म तुम्हारा कवन स्थाना॥
कवन दिसा से तुम चलि आये। जैहौ कहाँ कहा मन लाये॥
काकी भक्ति करौ चित लाई। सो कित बसै कौन से ठाँई॥
पूछत मन में दुख जनि मानो। करता आदि पुरुष पहिचानो॥
का भे माला तिलक के दीन्हे। का भे तीरथ वरत के कीन्हे॥
का भे सुनत भागवत गीता। चिन्ता मिटी न मन को जीता॥

दोहा—जेहि कर्ता से ऊपजे, सो बसे कौने देस।
ताहि चीन्ह परिचय करो, छोड़ सकल भ्रम भेस॥

(धर्मदास जी)

चौपाई—सुनि धर्मदास अचंभो भयऊ। ऐसो वचन काहु ना कहेऊ॥
जिंद रूप इन हीं कै देखा। कहत वचन सुख बहुत विवेका॥
सुनो जिंद मोरे दृढ़ ज्ञाना। बास मोर बंधो अस्थाना॥
धरन कसौंधन जाति को बानी। भजौं राम कृष्ण सारँग पानी॥
पारब्रह्म सेवौं चित लाई। सीताराम जपौं सुखदाई॥
सेवौं सालिगराम के पाऊँ। अर्द्ध-मुखी§ सखी लव लाऊँ॥

* बंधोगढ़ निवासी बनिये। † चेटा। ‡ जिन। § सिर झुका कर।

सकल भक्त के रहौं अधीना। गुरु सेवा जिन दिच्छा लीन्हा॥
बिरथा बचन सुनौं ना कहऊँ। प्रेम-भक्ति मैं निस दिन रहऊँ॥

दोहा—मोरे संका कछु नहीं, सेवौं श्रीरघुनाथ।
(जिन) ध्रू प्रहलाद उबारिया, सो हरि हमरे साथ॥

(जिंद)

मैं हौं जिंद सुनु बचन हमारा। तुम जनि होहु काल कै चारा॥
राम नाम सब दुनी पुकारै। राम अगिन जो काठै जारै॥
काहे न सुरति करौ घट माहीं। चीन्ह चीन्ह बूड़ौ भव माहीं॥
जिन्हैं कहत हौ नंद के लाला। सो तो भये सदन के काला॥
छल बल करि वे सब छलि डारे। पांडव जाइ हिवारे गारे॥
पांडव सम को भक्त कहावा। तिनहुँ को काल बली भरमावा॥
दसरथ सुत कहिये श्रीरामा। तिनहूँ चीन्हौ काल अकामा॥
करता राम कस भे मति-हीना। कपट मृगा उनहूँ नहिं चीन्हा॥

दोहा—दोउ करता बिरतंत है, कीन्हें जम के काम।
जीव अनेक प्रलय किये, ऐसे कृष्न अरु राम॥

चौपाई—धर्मदास है नाम तुम्हारा। काहे न चीन्हौ बचन हमारा॥
ज्ञान दृष्टि से चीन्हौ बानी। पाखँड पाहन पाखँड पानी॥
करता पाखँड कबहुँ न होई। यह संसय सब दुनी बिगोई॥
सालिगराम है बोलनहारा। देह सरूप तन साजि हमारा॥
धर्मदास सुनि चीन्हेउ ज्ञाना। हित के बचन सुनत मन माना॥
कोइ करता कहिये भगवाना। नाम मोर इन कैसे जाना॥
इन कर बचन ज्ञान औगाहा*। जिंद भेष धारे कोउ आहा॥
थापै सालिगराम न सेवा। तीरथ बरत कौ मेटै भेवा॥
राम कृष्न को मेट बताना। अहै जिंद को कैसो ज्ञाना॥

दोहा—धर्मदास मरटी† रहे, बहुत खोज नहिं कीन्ह।
सीधा‡ लै डेरे गये, जिंद उतर§ नहिं दीन्ह॥

चौपाई—इतना गुप्त बजार में कीन्हा। आप दुकान में डेरा लीन्हा॥
धर्मदास पहुँचे निज डेरा। मन महँ सोच कीन्ह बहुतेरा॥
बारह बरस तीर्थ हम कीन्हा। द्वारिका जाइ छाप हम लीन्हा॥
श्रीनाथ परसे चित लाई। राम नाथ दक्खिन होइ आई॥
दक्खिन परस गोदावरि गयेऊ। मेला भयो दरसन तहँ कियेऊ॥

* गहिरा। † मौन, चुप। ‡ भोजन की सामग्री। § जवाब।

परसि सिवाला औ हरिद्वारा। नीमषार मिस्र पग धारा॥
बद्रीनाथ दुवारे गयेऊ। श्रीविंद्रावन मथुरा अयेऊ॥

दोहा—मकर त्रिवेनी परसेहु, औ कासी अस्थान।
औरौ परसे जगन्नाथ, गंगासागर किये अस्नान॥

चौपाई—इतने तीर्थ छेत्र हम धाये। यह दुसरे हम मथुरा आये॥
राम नाम निज प्रान अधारा। सो यह जिंद मेटि सब डारा॥
कीजे कहा जिंद को भाई। जाति मलेच्छ कथै चतुराई॥
धरमदास जब नफर* बुलावा। घर लिपाय ज्योनार चढ़ावा॥
चौका बैठि कीन्ह अस्नाना। छानि छानि जल अदहन दीन्हा॥
अति पवित्र से करै रसोई। सालिगराम कै भोजन होई॥
लकड़ी चिउँटी उठीं अपारा। कोटिन जीव भये जरि छारा॥

दोहा—धरमदास को दुख भयो, हरि हरि करत पुकार।
जीव अनेक प्रलय भये, अस ज्योनार धिक्कार॥

चौपाई—लकड़ी काढ़ि जल माहिं बुझाई। चूल्हा बुझायो वह जल लाई॥
जो कछु जरे सो जरिगे भाई। जो बाचे सो लेहु बचाई॥
नफर हाथ जिंद बुलवाई। यह भोजन लै जिंदहिं खाई॥

(जिंद)

धरमदास तुम बड़े सुजाना। जीव दया काहे नहिं जाना॥
कीन्हा नेम अनेक अचारा। लकड़ी धोई रचे ज्योनारा॥
निरखि निरखि तुम काहे न बीना। नाम तोर देवतन कहि दीन्हा॥
जौलौं जीव दया नहिं आवै। तीरथ भरमि के जनम गँवावै॥
दसरथ सुत श्रीराम कहाये। तिनहूँ अपने जिव संताये॥

दोहा—बैर बालि के हतन को, विष्नु देह धरि लीन्ह।
जो जो जिव मारे हते, तिन तिन बदला लीन्ह॥

चौपाई—बचन हमार हिये में धरहू। संसय तजि के भोजन करहू॥
आतम कष्ट कबहुँ ना दीजे। रचे सो प्रेम से भोजन कीजे॥
हरि ना मिलैं अन्न के छाँड़े। हरि ना मिलैं डगर ही माँड़े॥
हरि न मिलैं घरबार तियागे। हरि न मिलैं निसु बासर जागे॥
दया धरम जहँ बसै सरीरा। तहाँ खोजिले कहैं कबीरा॥
सुनि धर्मदास धीर्ज मन कीन्हा। भलो सीख जिंद मोहिं दीन्हा॥
इन के ज्ञान महा रस बानी। मानो बचन अमी रस सानी॥
आन प्रसाद पत्र† भरि लीन्हा। काढ़ि परोसि के भोजन दीन्हा॥

* नौकर। † पत्तल।

दोहा—तुम ले जावो जिंद जी, हम करिये फरहार।
लंघन न करिहौं पीर जी, मानौं वचन तुम्हार॥

चौपाई—दै प्रसाद उठि आसन आयेऊ। धरमदास फरहार मँगायेऊ॥
सालिगराम को अर्पन कीन्हा। पुनि भोजन आपु ही कीन्हा॥
लिये आचमन अमृत मीठे। आसन करि सुचित्त होइ बैठे॥
पहर एक हरि चर्चा भयेऊ। पुनि निद्रा करने को गयेऊ॥
रैन सिरानी भयो विहाना। नफर सहित उठि बाहिर आना॥
धरमदास बंधो चलि आये। बाल गोपाल मनहि सुख पाये॥
जिंद वचन जब हिरदे आये। अंतर गत बहुते सुख पाये॥
आवै फिरि तब दरसन पाऊँ। पूछूँ आदि अंत चित लाऊँ॥

दोहा—सत्त सत्त सब उन कही, जानि परै मोहिं सार।
जिंद नाहि कोइ पुरुष है, अस बोलै ब्रह्म हमार॥

चौपाई—धरमदास मन कीन्ह विचारा। देवँ महोच्छ करौं भंडारा॥
सीधा सामग्री बहुत मँगाई। भेष भगत तहँ बहुत बुलाई॥
आये वैरागी औ ब्रह्मचारी। नागवीर आये दूधाधारी॥
फलाहारी अन्नधारी आये। जोगी जिंद बहु भेष बनाये॥
बहुत आये तपसी सन्यासी। जटा भभूत सुन्न विस्वासी॥
बाजै ताल मृदंग निसाना। संख नाद धुनि होइ निधाना॥
आव भगत सबहिन को कीन्हा। इच्छा भोजन सब को दीन्हा॥
सब को ज्ञान परख्यो धर्मदासा। लख्यो ज्ञान सब को बिनु सारा॥
कोइ तीरथ कोइ मूर्त्ति बँधावै। कोइ कलि केवल नाम दृढ़ावै॥
कोई कृष्न गोपालहिं गावै। कोइ दुर्गा सिव सक्ति धियावै॥
जोगी अलख अलख उचरई। जिंद सुमिरै अल्लाह खोदाई॥
सन्यासी राम देत ठहराई। परमहंस अविनासी गाई॥

दोहा—एक बात कोइ ना कहै, नाना मति परचंड।
धर्मदास परखे मते, जानि परे पाखंड॥

चौपाई—समुझि परौ ऐसो मन माहीं। जिंद का मता काहु सम नाहीं॥
बरस दिना गिरही मैं रहेऊ। बहुत सुरत कासी की कियेऊ॥
धर्मदास कासी चलि आये। हृदय हुती सो दरसन पाये॥
मुक्तिरूप सुख अमृत बानी। नाम कबीर जगत गुरु ज्ञानी॥
विमल विमल साखी पद गावै। जुरी भीर सबहिन समुझावै॥
धर्मदास तहँ निरखै ठाढ़ा। चंद चकोर जिमि आँखि पसारा॥
पंडित ज्ञानी सबै हराये। थाह कबीर की कोइ नहिं पाये॥
धर्मदास चीन्हे मन माना। येहि जिंद तजि होय न आना॥

दोहा—पिरथम मोहिं मथुरा मिले, वहुत वाद हम कीन्ह।
साँच साँच सब उन कही, मन हमार हर लीन्ह॥

चौपाई—धर्म्मदास हरष मन कीन्हा। बहुरि पुरुष मोहिं दरसन दीन्हा॥
अपने मन में कीन्ह विचारा। इनकर ज्ञान महा टकसारा॥
दोइ दीन के करता कहाई। इनकर भेद कोऊ नहिं पाई॥
इतना कहि मन कीन्ह विचारा। तब कबीर उन ओर निहारा॥
आओ भक्त महाजन पगु धारो। चिहुँकि चिहुँकि तुम काह निहारो॥
कहिये छिमा कुसल हौ नीके। सुरत तुम्हार बहुत हम झींके॥
धर्म्मदास हम तुम को चीन्हा। बहुत दिनन में दरसन दीन्हा॥
बहुत ज्ञान कहसी हम तुमहीं। बहुरि के अब तुम चीन्हो हमहीं॥
तुम तो भक्त हम जिंद फकीरा। सुधि करि देखो सत मत धीरा॥

दोहा—भली भई दरसन मिले, बहुरि मिले तुम आय।
जो कोई मोसे मिलै, ते जुग बिछुरि न जाय॥

चौपाई—सुनि धर्म्मदास हिये सुख भरे। सन्मुख धाइ पाँव जा परे॥
दया सिन्धु चितये भरि नैना। उठि धर्म्मदास अंक भरि लीन्हा॥
धर्म्मदास कबीर भे भेंटा। सत्त सब्द के खुले कपाटा॥
परगट ज्ञान ध्यान की खानी। सत्त सब्द निज अमृत बानी॥
जो कोइ सुनै चेत चित लाई। संसय टरै पाप छय जाई॥

तुलसी साहेब के ग्रंथ घटरामायन में लिखा है कि कबीर साहेब काशी में धर्म्मदास जी के घर गये जब वह मूर्त्ति पूजा कर रहे थे और बहुत से पंडित और पुजारी जमा थे। कबीर साहेब ने पूछा कि धात की गढ़ी मूरत और पत्थर की बटिया के पूजने का क्या फल है इस पर पुजारी बहुत बिगड़े और उनको नास्तिक और भला बुरा कह कर निकाल देना चाहा परन्तु धर्म्मदास जी ने रोका और उनसे देर तक चर्चा करते रहे जिससे उनकी कुछ शांति हुई। फिर कबीर साहेब ने मौज से यह चमत्कार दिखलाया कि एक हिचकी लेकर अपने गले से शालग्राम की बटिया निकाल कर धर दी और फिर उसको बुलाया तो वह हाथ पर आ बैठी। यह कौतुक देखकर धर्म्मदासजी के चित्त में पूरी रीति से कबीर साहेब की महिमा बैठ गई और अपनी स्त्री और पुत्रों को भी उनके चरणों पर गिराया। उनकी स्त्री और जेठे पुत्र चूड़ामणि ने तो पूरे भाव से कबीर साहेब की शरण ली और

उनको गुरू धारण किया परन्तु छोटे बेटे नारायणदास ने नाक भँव सिकोड़ ली और कबीर साहेब को पाखंडी और जादूगर ठहराया।

इन दोनों कथाओं से संतों के इस वचन का प्रमाण मिलता है कि जब स्वतः संत जगत में पधारते हैं तो अपनी निज अंश अर्थात् गुरुमुख को भी देर सबेर लाते हैं और उसी के द्वारे सारी रचना को पवित्र करते हैं। यद्यपि गुरुमुख को परमार्थ का चाव लड़कपन ही से रहता है परंतु पहिले माया का पर्दा उस पर पड़ा रहता है—जब समय आता है तब सतगुरु उसे अपने दर्शन और वचन से एक छिन में चेता देते हैं और माया के परदे को हटा देते हैं। जैसे कबीर साहेब पहिले संत अवतार हुए ऐसे ही धनी धर्म्मदासजी पहिले गुरुमुख प्रगट हुए जो कबीर साहेब की दया दृष्टि से संत गति को प्राप्त हुए।

धर्म्मदासजी ने कबीर साहेब की शरण लेने पर अपना सारा धन दौलत लुटा दिया और काशी में गुरु चरणों में रहने लगे। उनके पीछे उनके बड़े बेटे चूड़ामणिजी ने भी वही ऊँचा पद पाया परन्तु नारायणदास संतों की साखी के अनुसार काल के अवतार समझे जाते हैं।

कबीर साहेब के सम्वत् १५७५ में परमधाम को सिधारने के पीछे धर्म्मदास जी को उनकी गद्दी और सब ग्रंथ मिले और वह बहुत बरस तक जगत जीवों को चेताते और संत मत दृढ़ाते रहे। उनके गुप्त होने पर चूड़ामणिजी को गद्दी हुई और सब ग्रंथ मिले सिवाय कबीर साहेब के बीजक के जिसे भागू धर्म्मदासजी के गुरुभाई ने चोरा कर भगवान गोसाँई के हाथ मुक़ाम धनौली ज़िला तिरहुत को भेज दिया और फिर वहाँ अपनी गद्दी अलग क़ाइम की।

धर्म्मदास जी के शब्द हम पाँच बरस से इकट्ठा कर रहे हैं और उनकी बाबत ख़ास काशी के कबीरचौरा की गद्दी और दूसरे महंतों और कबीर पंथी साधुओं से दरियाफ़्त किया तो मालूम हुआ कि उनके शब्द कहीं अलग पोथी में लिखे नहीं हैं वरन कबीर साहेब की बानी में मिल गये हैं। कहते हैं कि न केवल वह पद जिन में अकेले

धरमदास जी की शब्दावली

॥ सतगुरु महिमा का अंग ॥

॥ शब्द १ ॥

गुरु मिले अगम के बासी ॥ टेक ॥
उनके चरन कमल चित दीजे, सतगुरु मिले अविनासी ॥१॥
उनकी सीत प्रसादी लीजे, छूटि जाय चौरासी ॥२॥
अमृत बुंद झरै घट भीतर, साध संत जन लासी* ॥३॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, सार शब्द मन बासी† ॥४॥

॥ शब्द २ ॥

गुरू मोहिं खूब निहाल कियो ॥ टेक ॥
बूड़त जात रहे भवसागर, पकरि के बाँहि लियो ॥१॥
चौदह लोक बसै जम चौदह, उनहुँ से छोरि लियो ॥२॥
तिनुका तोरि दियो परवाना, माथे हाथ दियो ॥३॥
नाम सुना दियो कंठी माला, माथे तिलक दियो ॥४॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, पूरा लोक दियो ॥५॥

॥ शब्द ३ ॥

सतगुरु धोबी जो मिलै, दिल दाग छोड़ावै ॥ टेक ॥
ब्रह्म अगिन परगट करै, कर्म भर्म जरावै ।
तत्त की रेह लगाइ कै, तब भाठि चढ़ावै ॥१॥
मान सरोवर सागरे, चित घाट बँधावै ।
सुरति सिला पर धोइ कै, मन मैल छोड़ावै ॥२॥
नाभि पवन निर्मल निरति, सूरति लौ लावै ।
बजी अवाज ब्रह्मंड में, बिरले लखि आवै ॥३॥

---

* चाशनी । † दूसरे लिपि में "लागी" है ।

गुरु गम बानी ऊचरै, पूरुप दरसावै ।
कह कबीर धर्मदास से, अच्छर परसावै ॥४॥

॥ शब्द ४ ॥

सतगुरु चारिउ बरन से ऊँचे ॥ टेक ॥
ना मानो तौ साखि बताओँ, सेवरी के फल रूचे ॥१॥
राजा युधिष्ठिर जज्ञ रचो है, घंट न बाजे संत के रूसे॥२॥
सुपच भगत जब ग्रास उठाये, बाजे घंट गगन चढ़ि ऊँचे३
धरमदास बिनवै कर जोरी, सतगुरु सब्द लगैं मोहिं नीके४

॥ शब्द ५ ॥

अब गुरु मिले सनेही आई ॥ टेक ॥
चलो सखी जहँ जाइये, जहँ बसै पुरुप पुराना ।
चरन चुरामनि* चँवर डोलावै, तन की तपन बुझाई ॥१॥
सुरति समानी सार सब्द में, निरत रही लव लाई ।
प्रेम पियारी रटै पिया को, यह जिव पुलकित जाई ॥२॥
भवसागर औगाह अगम है, सूझै वार न पारा ।
हंस उबारन सतगुरु आये, वही काढ़ि लै जाई ॥३॥
जन्म जन्म के हंस उबारन, अजहु उबारनहारा ।
जा के साँची लगन लगी है, सो वोहि लोकै जाई ॥४॥
कह कबीर धर्मदास से, निरति रहो लौ लाई ।
नाम पान जो पाँजी पावै, सो सतलोक बसाई ॥५॥

॥ शब्द ६ ॥

आज घड़ी आनन्द की, सतगुरु आये मोरे धाम हो ॥टेक॥
आये गुरुदेव सजन पठयो, भयो हरप अपार हो ।
सकल सुन्दर साजि आरत, होत मंगलचार हो ॥१॥

* धरमदास जी के पुत्र और गुरुमुख का नाम ।

दियो दरसन मन लुभायो, सुन्यो वचन अमोल हो।
अछय छाया सघन घन की, करत हंस कलोल हो ॥२॥
दया कीन्हो निर्गुन दीन्हो, आपनी करि सैन हो।
भक्ति मुक्ति सनेही सजनै, लियो परथम चीन्ह हो ॥३॥
भये कलमल दूर तन के, गई तपन नसाय हो।
अटल पन्थ कबीर दीन्हा, धर्मदास लखाय हो ॥४॥

॥ शब्द ७ ॥

मोरे पिया मिले सत ज्ञानी ॥ टेक ॥
ऐसन पिय हम कबहुँ न देखा, देखत सुरत लुभानी ॥१॥
आपन रूप जब चीन्हा बिरहिन, तब पिय के मन मानी ॥२॥
जब हंसा चले मानसरोवर, मुक्ति भरै जहँ पानी ॥३॥
कर्म जलाय के काजल कीन्हा, पढ़े प्रेम की बानी ॥४॥
धर्मदास कबीर पिय पाये, मिट गइ आवाजानी ॥५॥

॥ शब्द ८ ॥

गुरु पद अहै सबन से भारी ॥ टेक ॥
चारौ बेद तुलै नहिं गुरु पद, ब्रह्मा बिष्नु और ब्रह्मचारी॥१
नारद मुनि भये गुरुपद भजि कै, जपत सेस संकर की नारी२
सुर नर मुनि भये गुरुपद भजि कै, जपत राम अरु जनक दुलारी
धर्मदास मैं गुरुपद भजिहौं, साहेब कबीर समरथ बलिहारी

॥ शब्द ९ ॥

हंस उबारन सतगुरु, जग में आइया।
प्रगट भये कासी में, दास कहाइया ॥१॥
बाम्हन औ सन्यासी, तो हाँसी कीन्हिया।
कासी से मगहर आये, कोई नहिं चीन्हिया ॥२॥

मगहर गाँव गोरखपुर, जग में आइया।
हिन्दू तुरुक प्रमोधि के, पंथ चलाइया ॥३॥
बिजुलीखाँव पठान, सो कबुर खोदाइया।
बिजुलीसिंह बघेल, साजि दल* आइया ॥४॥
रानी पतिया पठाय, जीव जनि मारिया।
मुरदा न होय कबीर, बहुरि पछिताइया ॥५॥
खोदि के देखी कबुर, गुरु दँह न पाइया।
पान फूल लै हाथ, सेन* फिरि आइया ॥६॥
हद बाँधो दरियाव, उड़ीसा जाइ कै।
लछमि सहित जगन्नाथ, मिले तहँ धाइ कै ॥७॥
पंडा पाखँड जानि कै, कौतुक कीन्हिया।
एक से अनँत कला होइ, दरसन दीन्हिया ॥८॥
आगम कहँ कबीर, सुनो धर्म आगरा।
बहुत हंस लै साथ, उतरो भव सागरा ॥९॥

॥ शब्द १० ॥

धन हौ धन साहेब बलिहारी ॥ टेक ॥
कासी में हाँसी करवाई, गनिका संग लगाई।
हरि के पंडा जरत उबारे, अपने चरन जल ढारी ॥१॥
मगहर में एक लीला कीन्हीं, हिन्दू तुरुक ब्रत धारी।
कबर खोदाइ के परचा दीन्हो, मिटि गयो झगरा भारी॥२॥

* फ़ौज। कबीर साहेब के जो चरित्र इन दोनों शब्दों (९ और १०) में इशारे में लिखे हैं उनकी सविस्तार कथा कबीर साहेब के जीवन-चरित्र में मिलेगी जो कबीर शब्दावली भाग १ के आदि में छपा है॥

पांडव जज्ञ सुफल ना होई, कोटिन जुरे अचारी ।
सुपच भक्त ने ग्रास उठायो, घंट बज्यो तब भारी ॥३॥
तच्छक आन डस्यौ रानी को, विषम लहर तन भारी ।
रानी पर जब किरपा कीन्हीं, उनहूँ को हंस उबारी ॥४॥
हरि को मंदिर बनन न पावै, समुँद लहर उठि भारी ।
आसा रूप के समुँद हटायो, तीरथ करै संसारी ॥५॥
जो जा सुमिरै सो ता प्रगटै, जग मैं नर अरु नारी ।
धरमदास पर किरपा कीन्हीं, हंसराज लखे भारी ॥६॥
जो जो सरन गही सतगुरु की, उबरे नर अरु नारी ।
साहिब कबीर मुक्ति के दाता, हम को लियो उबारी ॥७॥

॥ नाम महिमा का अंग ॥

॥ शब्द १ ॥

नाम रस ऐसा है भाई ॥ टेक ॥
आगे आगे दाहि चलै, पाछे हरियर होइ ।
बलिहारी वा बृच्छ की, जड़ काटे फल होइ ॥१॥
अति कड़ुवा खहा घना रे, वा को रस है भाई ।
साधत साधत साध गये हैं, अमली होय सो खाई ॥२॥
सूँघत के बौरा भये हो, पीयत के मरि जाई ।
नाम रस्स सो जन पिये, धड़ पर सीस न होई ॥३॥
संत जवारिस* सो जन पीवै, जा को ज्ञान प्रगासा ।
धरमदास पी छकित भये हैं, और पिये कोइ दासा ॥४॥

---

* पेट के दर्द की दवा ।

॥ शब्द २ ॥

नाम रटन रट लागि रहै, कोइ साधु सयाना ॥ टेक ॥
साध के चाकर दुइ जना, बंका सुर* ज्ञाना† ।
सीस अरप आगे धरो, तब बाँधो बाना ॥१॥
साहेब द्वारे भीड़ भे, विरला ठहराना ।
कंचन कोट सुमेर बना, गज दीन्हा दाना ॥२॥
चाल चले गजराज की, अलमस्त समाना ।
सीस तिलक बंस बेलि है, जम देखि डेराना ॥३॥
धरती मूल बिचारि के, तब धुनि उदकाना ।
कोटि गऊ को दान दे, नहिँ नाम समाना ॥४॥
कह कबीर धर्मदास से, पावै पद निरबाना ।
आदि अंत की बारता, सतगुरु परवाना ॥५॥

॥ शब्द ३ ॥

चाकर हौं निज नाम का, सुनो संत सिपाही ॥ टेक ॥
चरन कँवल सतगुरु दिया, हम सीस चढ़ाई ।
सत्त दरस ऐसे भया, गुरु कमर बँधाई ॥१॥
मारे मुरचा सब्द से, भ्रम के गढ़ टूटे ।
अछर पुरुष एक वृच्छ है, तहँ लागे जाई ॥२॥
काँपन लागे दूतवा, चढ़े संत सिपाही ।
मारे गोला नाम के सब फउज पराई ॥३॥
नौबत बाजै लोक में, जीते जमराई ।
कह कबीर धर्मदास से, फिरी नाम दोहाई ॥४॥

* बाँका सूरमा । † ज्ञानी ।

॥ शब्द ४ ॥

हम सत्त नाम के बैपारी ॥ टेक ॥
कोइ कोइ लादै काँसा पीतल, कोइ कोइ लौंग सुपारी ।
हम तो लाद्यौ नाम धनी को, पूरन खेप हमारी ॥१॥
पूँजी न टूटै नफा चौगुना, बनिज किया हम भारी ।
हाट जगाती रोक न सकि है, निर्भय गैल हमारी ॥२॥
मोती बुंद घट ही में उपजै, सुकिरत भरत कोठारी ।
नाम पदारथ लाद चला है, धर्मदास बैपारी ॥३॥

॥ चेतावनी का अंग ॥

॥ शब्द १ ॥

सब्द की बेरिया जात टरी ॥ टेक ॥
उहाँ से आये का कहि आये, का करने लगे आन ।
इहाँ आइ परपंच भुलाने, बैठे अधम ठिकान ॥१॥
भाई बंधु सुत कुटुम कबीला, ये कह जग में नाम ।
तुम जाने उनहीं सँग रहना, ठाढ़ काल मुसक्यान ॥२॥
आये नाव काठ से बोझी, दिन दिन अति गुरुवाई ।
आगे जाम* लेइ कर लूटी, देइ छाती पर लातीं ॥३॥
गहे सब्द ज्ञान कर दीपक, बैठे सत के पासा ।
साहेब कबीर हंसन के राजा, धरमदास निजु दासा ॥४॥

॥ शब्द २ ॥

थोरे दिन की जिंदगी, मन चेत गँवार ॥ टेक ॥
कागद के तन पुतरा, डोरी साहेब हाथ ।
नाना नाच नचावही, नाचै संसार ॥१॥

* जम ।

काच माटी कै घइलिया, भरि लै पनिहार।
पानी परत गल जावही, ठाढ़ी पछिताय ॥२॥
जस धूआँ कै धरोहरा जस बालू कै रेत।
हवा लगे सब मिटि गये, जस करतब प्रेत ॥३॥
ओछे जल कै नदिया हो, बहै अगम अपार।
उहाँ नाव नहिँ बेरा हो, कस उतरब पार ॥४॥
धरमदास गुरु समरथ हो, जा को अदल अपार।
साहेब कबीर सतगुरु मिले, आवा गवन निवार ॥५॥

॥ शब्द ३ ॥

कहो केते दिन जियबौ हो, का करत गुमान ॥ टेक ॥
कच्चे बासन का पिँजरा हो, जा में पवन समान।
पंछी का कौन भरोसा हो, छिन में उड़ि जान ॥१॥
कच्ची माटी कै घड़ुवा हो, रस बूँदन सान।
पानी बीच बतासा हो, छिन में गलि जान ॥२॥
कागद की नइया बनी, डोरी साहेब हाथ।
जौने नाच नचैहैँ हो, नाचब वोही नाच ॥३॥
धरमदास एक बनिया हो, करै झूठी बजार।
साहेब कबीर बनजारा हो, करैँ सत बैपार ॥४॥

॥ शब्द ४ ॥

घड़ा एक नीर का फूटा। पत्र एक डार से टूटा ॥१॥
ऐसहि नर जात जिँदगानी। अजहु नहिँ चेत अभिमानी२
भुलो जनि देख तन गोरा। जगत में जीवना थोरा ॥३॥
निकरि जब प्रान जावैगा। कोई नहिँ काम आवैगा॥४॥
सजन परिवार सुत दारा। सभे एक रोज होइ न्यारा॥५॥
तजो मद लोभ चतुराई,। रहो निरसंक जग माहीँ ॥६॥

सदा ना जान ये देही । लगावो नाम से नेही ॥७॥
कहै धर्मदास कर जोरी । चलो जहँ देस है तोरी ॥८॥

॥ उपदेश का अंग ॥

॥ शब्द १ ॥

सुचित होइ सब्द बिचारो हो ॥ टेक ॥
सब्द बिचार नाम धर दीपक, लै उर वारो हो ।
जुगन जुगन के अरुझनि, छन मैं निरुवारो हो ॥१॥
पंथे चलो गरीब होय, मद मोह निवारो हो ।
साहेब नैन निकट बसै, सत दरस निहारो हो ॥२॥
आपे जगत जिताइ के, मन सब से हारो हो ।
जवन बिधी मनुवा मरे, सोइ भाँति सम्हारो हो॥३॥
बास करो सत लोक मैं, दुख नगर उजाड़ो हो ।
धरमदास निज नाम पर, तन मन धन वारो हो ॥४॥

॥ शब्द २ ॥

मन रही आसन मारि, मँदिल से न डोलो हो ॥ टेक ॥
राते माते रहो, बहुत जनि बोलो हो ।
निरखत परखत रहो, पलक जनि खोलो हो ॥१॥
रजनी के दिहल किवार, सत कुंजी खोलो हो ।
ले उँजियारि मैं बैठि, निर्भय होइ खेलो हो ॥२॥
चौका बना चौगान, जगमग अभिराज* हो ।
रबि ससि की छबि निरखि, हंसा होइ गाज हो ॥३॥
ब्रह्मा बिष्नु महेस, निर्गुन अस्थूला हो ।
हिलिमिलि करु सतसंग, फिरत कहाँ भूला हो ॥४॥

* सर्वोपरि, सब का राजा ।

गुरु के चरन धरु सीस, और सब त्यागो हो।
जहाँ जहाँ तुम रहो, भक्ति बर माँगो हो ॥६॥
चमकत निर्मल रूप, झलकै जस हीरा हो।
होइ मगन धर्मदास, बैठे तेहि तीरा हो ॥८॥

॥ शब्द ३ ॥

वा करता को सेइये, जिन सृष्टि उपाई ॥ टेक ॥
कोटिन ब्रह्मा बेद पढ़ि, पढ़ि जनम गँवाई।
कोटिन बिष्नू होइ गये, कोइ पार न पाई ॥१॥
तीर्थ गये कोइ ना तरै, चलि चलि मरि जाई।
जल बिच आस लगाइ कै, मंगर* तन पाई ॥२॥
झूठे पंडित वेद पढ़ि, पढ़ि जग भरमाई।
उन के पुरखा मरि गये, उन काहे न जियाई ॥३॥
आदि अंत की बारता, सतगुरु से पावो।
कह कबीर धर्मदास से, हंसा समुझावो ॥४॥

॥ शब्द ४ ॥

का भरमत भटकत फिरो, करो खोज बनाई।
मूल सब्द चीन्हे बिना, जिव जम लै जाई ॥१॥
पान परवाना पाइ कै, निज लगन धरावो।
जम की कला मिटाइ कै, लेव अंग चढ़ाई ॥२॥
मूल सब्द हम कहि दिया, जुग जुग समुझाई।
जो निस्चै करि मानिहै, तेहिं लैंव बचाई ॥३॥
कह कबीर धर्मदास से, हम लीन्ह चिताई।
अजर अमर घर लै चलूँ, जहँ काल न जाई ॥४॥

* मगर।

॥ शब्द ५ ॥

सुरत निरत दोउ मतो* करत हैं, चलो सतगुरु पै जइये हो ॥टे०
सतगुरु चीन्हि चरन चित लैये, दृष्टि से दृष्टि मिलइये हो ।
सतगुरु साह साध सौदागर, भक्ति पटो[†] लिखवइये हो ॥१॥
मन मानिक की खुलीं किवरियाँ, चढ़ गइ झमकि अटरिया हो ।
नहिँ वहँ डोरि नहीं वहँ रसरी, अमर लोक कस पइये हो ॥२
है वहँ डोर सुरति कर सोझी[‡], गुरु के सब्द चढ़ि जइये हो।
घर है रमानो[§] मेरो बगर[‖] रमानो, फूल रही फुल बगिया हो।
अछे कमल पर बहै सुरसरी[¶], तहँ बैठे हंस नहइये हो ।
धरमदास की अरज गुसाँईं, आवागवन मिटइये हो ॥४॥

॥ बिरह और प्रेम का अंग ॥

॥ शब्द १ ॥

सतगुरु आवो हमरे देस, निहारौं बाट खड़ी ॥ टेक ॥
वाहि देस की बतियाँ रे, लावैं संत सुजान ।
उन संतन के चरन पखारौं, तन मन करौं कुरबान ॥१॥
वाही देस की बतियाँ हम से, सतगुरु आन कही ।
आठ पहर के निरखत हमरे, नैन की नींद गई ॥२॥
भूल गई तन मन धन सारा, व्याकुल भया सरीर ।
बिरह पुकारै बिरहनी, ढरकत नैनन नीर ॥३॥
धरमदास के दाता सतगुरु, पल में कियो निहाल ।
आवागवन की डोरी कटि गई, मिटे भरम जंजाल ॥४॥

---

* सलाह । † पट्टा । ‡ सीधी । § रमनीक ‖ हाता । ¶ गंगा ।

॥ शब्द २ ॥

मितऊ मड़ैया सूनी करि गैलो ॥ टेक ॥
अपन बलम परदेस निकरि गैलो,
हमरा के कछुवो न गुन दै गैलो ॥१॥
जोगिन होइ के मैं बन बन ढूँढ़ौं,
हमरा के बिरह बैराग दै गैलो ॥२॥
सँग की सखी सब पार उतरि गैलीं,
हम धन ठाढ़ी अकेली रहि गैलो ॥३॥
धरमदास यह अर्ज करतु है,
सार सब्द सुमिरन दै गैलो ॥४॥

॥ शब्द ३ ॥

नैन दरस बिन मरत पियासा ॥ टेक ॥
तुमहीं छाँड़ि भजूँ नहिँ औरै, नाहिँ दूसरी आसा ॥१॥
आठो पहर रहूँ कर जोरी, करि लेहु आपन दासा ॥२॥
निसु बासर रहूँ लव लीना, बिनु देखे नहिँ बिस्वासा॥३
धरमदास बिनवै कर जोरी, देहु निज लोक निवासा ॥४॥

॥ शब्द ४ ॥

साहेब चितवो हमरी ओर ॥ टेक ॥
हम चितवैं तुम चितवो नाहीं, तुम्हरो हृदय कठोर ॥१॥
औरन को तो और भरोसा, हमैं भरोसो तोर ॥२॥
सुखमनि सेज बिछाऔं गगन मैं, नित उठि करौं निहोर॥३
धरमदास बिनवै कर जोरी, साहेब कबीर बंदीछोर ॥४॥

॥ शब्द ५ ॥

मैं हेरि रहूँ नैना सो नेह लगाई ॥ टेक ॥
राह चलत मोहिँ मिलि गये सतगुरु, सो सुख बरनि न जाई
देइ के दरस मोहिँ बौराये, लै गये चित्त चुराई ॥२॥

छवि सत दरस कहाँ लगि बरनौं, चाँद सुरज छपि जाई ॥३॥
धरमदास विनवै कर जोरी, पुनि पुनि दरस दिखाई॥४॥

॥ शब्द ६ ॥

कहौं बुझाय दरद पिय तो से ॥ टेक ॥
दरद मिटै तरवार तीर से ।
किधौं मिटै जब मिलहुँ पीव से ॥१॥
तन तलफै हिय कछु न सोहाय ।
तोहि बिन पिय मो से रहल न जाय ॥२॥
धरमदास की अरज गुसाँईं ।
साहेब कबीर रहौं तुम छाँहीं ॥३॥

॥ शब्द ७ ॥

आज मेरे सतगुरु आये मिहमान ।
तन मन जिवड़ा करौं कुरबान ॥१॥
फूली फिरौं न अंग समान ।
सतगुरु आवन सुनि लये कान ॥२॥
चंदन चैाकी अँगना बिछान ।
ता पर बैठे सतगुरु आन ॥३॥
फूलन हार गले पहिरान ।
चंद चकोर ज्यौं इकटक ध्यान ॥४॥
चरन धोय चरनोदक पान ।
सगले पाप मोचन किये आन ॥५॥
प्रेम सहित बिंजन पकवान ।
कंचन थाल सजाये आन ॥६॥
हाथ जोरि पुनि बिनती ठान ।
जेँवो सतगुरु पुरुष पुरान ॥७॥

सीत प्रसाद सतगुरु दियो दान।
जम किंकर को मर्दन मान ॥८॥
धर्मदास अमन गुजरान।
साहेब कबीर निछावर प्रान ॥९॥

॥ शब्द ८ ॥

मोरा पिया बसै कौने देस हो ॥ टेक ॥
अपने पिया के ढुँढ़न हम निकसीं, कोइ न कहत सनेस हो १
पिया कारन हम भई हैं बावरी, धरो जोगिनिया कै भेस हो२
ब्रह्मा बिष्नु महेस न जाने, का जानै सारद सेस हो ॥३॥
धनि जो अगम अगोचर पइलन, हम सब सहत कलेस हो४
उहाँ के हाल कबीर गुरु जानैं, आवत जात हमेस हो ॥५॥

॥ शब्द ९ ॥

सजन से प्रीत मोहिँ लागी। दरस को भयो अनुरागी ॥१॥
नहीं बैराग मोहिँ आवै। साहेब के गुन नितै गावै ॥२॥
अभरन भूपन तनै साजूँ। पिया को देखि हँस हुलसूँ ॥३
भया है गैब का डंका। चलो जहँ देस है बंका ॥४॥
बिना ऋतु फूल एक फूला। भँवर रँग देखि के भूला ॥५॥
तकत छबि टरै ना टारी। होय तिस बरन* बलिहारी ॥६॥
कहै धर्मदास कर जोरी। साहेब से अर्ज है मोरी ॥७॥

॥ शब्द १० ॥

साहेब तेरी देखोँ सेजरिया हो ॥ टेक ॥
लाल महल के लाल कँगूरा, लालिनि लागि किवरिया हो॥१॥
लाल पलँग के लाल बिछौना, लालिनि लागि झलरिया हो॥२

* रंग।

लाल साहेब की लालिनि मूरत, लालि लालि अनुहरिया हो३
धरमदास विनवै कर जोरी, गुरु के चरन बलिहरिया हो ॥४

॥ शब्द ११ ॥

साजन हमरे दरस सतगुरु के ॥ टेक ॥
अपने सजन को आवत देखूँ, दरसन करूँ नैन भरि भरि के॥१॥
चरन धोइ चरनामृत लेहूँ, जूठन पाउँ पेट भरि भरि के॥२॥
नीचा कर्म काटि गुरु दीन्हा, चरन कँवल पै सीस धरि धरि के ॥३॥
धरमदास विनवै कर जोरी, भव उतरूँ सतनाम सुमिरि के ४

॥ शब्द १२ ॥

गुरु मोहिं सजीवन मूर दई ॥ टेक ॥
कान लागि गुरदिच्छा दीन्हीं, जन्म जन्म को मोल लई ॥१॥
दिन दिन औगुन छूटन लागे, बाढ़न लागी प्रीति नई ॥२॥
मानिक सुंभ से मानिक उपजै, हीरा हंस से भैंट भई ॥३॥
धरमदास विनवै कर जोरी, दिल की दुर्मति दूर भई ॥४॥

॥ शब्द १३ ॥

पिया बिन मोहिं नींद न आवै ॥ टेक ॥
खन गरजै खन बिजुली चमकै, ऊपर से मोहिं झाँकि दिखावै
सासु ननद घर दारुनि आहैं, नित मोहिं बिरह सतावै ॥२॥
जोगिन ह्वै के मैं वन वन ढूँढूँ, कोऊ न सुधि बतलावै ॥३॥
धरमदास विनवै कर जोरी, कोइ नेरे कोइ दूर बतावै ॥४॥

॥ शब्द १४ ॥

पिया बिना मोहिं नीक न लागै गाँव ॥ टेक ॥
चलत चलत मोरे चरन दुखित भे, आँखिन परिगै धूर ॥१॥
आगे चलूँ पंथ नहिं सूझै, पाछे परै न पाँव ॥२॥
ससुरे जाउँ पिया नहिं चीन्है, नैहर जात लजाउँ ॥३॥

इहाँ मोर गाँव उहाँ मोर पाही*, बीचे अमरपुर धाम ॥४॥
धरमदास विनवै कर जोरी, तहाँ गाँव ना ठाँव ॥५॥

॥ शब्द १५ ॥

साँझ भई पिया बिन अकुलानी ॥ टेक ॥
देस देस ढूँढ़ि फिरि आई, लोक लोक मैं छानी ।
कोइ न खोजे पिय अपने को, झुंड की झुंड गुमानी ॥१॥
आतुर जाय पूछै सखियन से, कहो पिय रूप बखानी ।
निरंकार सब के मन भावै, सुनि सुनि भै गलतानी॥२॥
पुनि अकुलाय भवन को लौटी, त्रिकुटी महल समानी ।
सोहं सब्द सत्त दरसावै, वाही के रूप लोभानी ॥३॥
धन सतगुरु जीवन के दाता, दीन्हा नाम निसानी ।
कहैं कबीर बहुत दिन बीता, धर्मनि तुम पहिचानी ॥४॥

॥ आरती का अंग ॥

॥ शब्द १ ॥

कैसे आरत करौं तिहारी । महा मलिन गति देँह हमारी ॥१
मैलहिं तें उपज्यो संसारा । मैं कैसे गुन गावौं तुम्हारा ॥२॥
झरना झरै दसो दिस द्वारे । कस ढिंग आवौं साहेब तुम्हारे
जो प्रभु देहु अगर की देँही । तब होवौं मैं सब्द सनेही ॥४॥
मलयागिर में बसत भुवंगा । विष अमृत रहै एकै संगा ॥५॥
तिनुका तोड़ दिया परवाना । तब हम पायौ पद निर्वाना ६
धर्मदास कबीर बल गाजै । गुरु परताप आरती साजै ॥७॥

॥ शब्द २ ॥

आरत गुरु कबीर की कीजै । जा के सेव जुगो जुग जीजै ॥१॥
संतन दया कीन्ह अधिकारी । सतसंगत मिलि अधम उधारी

* दूसरे गाँव की खेती ।

जन्म अनेक बीति गयो मोरा। अब मैं दरसन पायो तोरा ३
अबके आरत सतगुरु चीन्हा। सुरत लगाय बंदगी कीन्हा ४
अजर अमर है तुम्हरी काया। धरमदास गुरु सरनी आया ५

॥ शब्द ३ ॥

आरति मोहिं तुम्हारी परम गुरु, आरति मोहिं तुम्हारी।
प्रातःकाल सकल विधि पूरन, धारी साज सँवारी ॥१॥
नरियर पान बदाम छुहारा, लौंग लायची सारी।
भाव भक्ति से गुरू हिलोरा, संत मिले फल चारी ॥२॥
दयावंत धरनी पग धारे, हरपि साधु संसारी।
मेटे बंधन त्रास जिवन के, चिन्ता सकल निवारी ॥३॥
पूरन पुरुप सिंहासन राजे, सोभा बहु विधि धारी।
आरति करैं संत सब गावैं, धरमदास बलिहारी ॥४॥

॥ शब्द ४ ॥

ऐसी आरति दियो लखाई। परखो जोति अधर फहराई ॥
धरती थंबन उदित अकासा। ता पर सूर करै परकासा ॥१॥
हीरा कोटि होय उँजियारी। बिना सुगंध पुहुप की बारी॥२
चन्द्र लगन कीन्हा परकासा। चौदह जम जा के डरै तरासा
गहो निरच्छर निस्चै डोरी। धर्मराय से तिनुका तोरी ॥४॥
कहैं कबीर सुनो धर्मदासा। यह निज भेद कहौं परकासा५

॥ शब्द ५ ॥

ऐसी आरत कहो समुझाई। जा सुमिरन तें काल नसाई॥१॥
धरती थंब करो परकासा। चौदह जम जा की मानै त्रासा२
अललपच्छ भृङ्गी तन बासा। सो निज भेद करो परकासा ३
पवन पचासी नाम कहि लीजै। पाछे ज्ञान सिंहासन दीजै४
सुनौ कबीर कहै धर्मदासा। उदय दीप लौं करौ प्रकासा ॥५॥

॥ शब्द ६ ॥

आरति बंदीछोर समरथ की। चरन कँवल चित राखु पुरुष की
आरति सोँ भूमी पग धारे। सतजुग मेँ सत सब्द उचारे ॥२॥
आरति सोँ जग प्रगटे आई। त्रेता मंदर नाम कहाई ॥३॥
आरति सोँ मुख मंगल गाये। द्वापर करुनामय कहवाये ॥४॥
आरति सोँ जग बंधी आसा। कलजुग केवल नाम प्रकासा५
चारो जुग धर प्रगट सरीरा। आरत गावै धर्मदास कबीरा६

॥ शब्द ७ ॥

धरमदास आरती साजा। पाँच तत्त मुख बेद उचारा ॥१॥
पहिले तेज पवन अरु पानी। रहे निरंतर अंतरजामी ॥२॥
गगन जोति गरजै असमाना। देखो दृष्टि धुजा फहराना॥३॥
कोटि ब्रह्म जहँ पढ़त पुराना। कोटिन संभु धरै उर ध्याना॥४
कोटि बिष्नु बिनवै कर जोरी। और देव सब तँतिस क्रोरी ५
सेस सहसमुख निसु दिन गावै। अस्तुति करत पार नहिँ पावै
सतगुरु मिलैँ तो भेद बतावैँ। पाँच तत्त लै अगम लखावैँ ॥७
कहँ कबीर हंस-पति राई। धरमदास आरति फल पाई॥८॥

॥ शब्द ८ ॥

हंस उबारि अपन करि लीन्हा। संझा आरति ढुकिरत कीन्हा
पहिले आरति अलख बिराजै। ओअं सोहं ध्यान लगावै ॥२
गगन मँदिल बिच फूल एक फूल। तरे भई डार उपर भयो मूल
अंखंड बिराजै ता की छाया। लख चौरासी के फंद छुड़ाया४
साख से उपजि सकल संसारा। लख चौरासी से होइ रहु न्यारा
धरमदास बिनवै कर जोरी। गुरु प्रताप से आरति जोरी ॥६

॥ शब्द ९ ॥

संझा आरति नाम तुम्हारा। अनहद धुनि गुरु ज्ञान बिचारा
तत का तेल काया की बाती। ब्रह्म अगिन अंदर धधकारी

पाँचो बाती निरमल करि बारी। सुरति चँवर लै सन्मुख झारी
प्रेम कै पुहुप धूप धरो ध्याना। चित चंदन घसि अंग लगाना
अद्भुत जोति अधर परगासा। आरति करै कबीर धर्मदासा

॥ बिनती का अंग ॥

॥ शब्द १ ॥

गुरु पैयाँ लागौं नाम लखा दीजो रे ॥ टेक ॥
जनम जनम का सोया मनुवाँ, सब्दन मार जगा दीजो रे ॥१
घट अँधियार नैन नहिँ सूझै, ज्ञान का दीप जगा दीजो रे
विष की लहर उठत घट अंतर, अमृत बूँद चुवा दीजो रे ॥३॥
गहिरी नदिया अगम बहै धरवा, खेय के पार लगा दीजो रे४
धरमदास की अरज गुसाँईं, अब के खेप निभा दीजो रे ॥५॥

॥ शब्द २ ॥

भक्ति दान गुरु दीजिये देवन के देवा हो।
चरन कँवल बिसरौं नहीं करिहौं पद सेवा हो ॥१॥
तिरथ बरत मैं ना करौं ना देवल पूजा हो।
तुमहिँ ओर निरखत रहौं मेरे और न दूजा हो ॥२॥
आठ सिद्धि नौ निद्धि हैं बैकुंठ निवासा हो।
सो मैं ना कछु माँगहूँ मेरे समरथ दाता हो ॥३॥
सुख सम्पति परिवार धन सुन्दर बर नारी हो।
सुपनेहु इच्छा ना उठै गुरु आन तुम्हारी हो ॥४॥
धरमदास की बीनती साहेब सुनि लीजै हो।
दरसन देहु पट खोलि कै आपन करि लीजै हो ॥५॥

॥ शब्द ३ ॥

साहेब साहेबी तन हेरो ॥ टेक ॥

चंच पंख बिन जटा पखेरू, मम गति समझ सवेरो ।
अब जनि तजो मोहिँ यह खंडा, तुम सत लोक बसेरो ॥१॥
निस बासर मोहिँ संसय ब्यापै, काम क्रोध मद घेरो ।
या से नाम लेन नहिँ पाऊँ, धृग जीवन जग मेरो ॥२॥
प्रभु पद भिन्न भयो मैं जब से, देँह धरे बहुतेरो ।
त्रिविधि ताप दुख सहे निरंतर, कबहुँ न भयो सुखेरो ॥३॥
मम हित जानि प्रान-पति सतगुरु, जुगन जुगन तुम टेरो ।
मैं अचेत प्रीति मोह बस, तुम तजि भयो अनेरो ॥४॥
मैं हौं जीव तुम्हार दया-निधि, आदि अंत को चेरो ।
अब मोहिँ लेहु छुड़ाइ काल से, औगुन मेटो मेरो ॥५॥
बंदी-छोर सुनो करुना-मय, करो हिये बिच डेरो ।
धर्मदास पर दाया कीजै, चौरासी से फेरो ॥६॥

॥ शब्द ४ ॥

साहेब दीनबंधु हितकारी ॥ टेक ॥

कोटिन ऐगुन बालक करई, मात पिता चित एक न धारी १
तुम गुरु मात पिता जीवन के, मैं अति दीन दुखारी ॥२॥
प्रनत-पाल करुना-निधान प्रभु, हमरी ओर निहारी ॥३॥
जुगन जुगन से तुम चलि आये, जीवन के हितकारी ॥४॥
सदा भरोसे रहूँ तुम्हारे, तुम प्रतिपाल हमारी ॥५॥
मोरे तुम हीं सत्त सुकृत हौ, अंतर और न धारी ॥६॥
जानत हो जन के तन मन की, अब कस मोहिँ बिसारी ॥७॥
को कहि सकै तुम्हारी महिमा, केहि न दिह्यो पद भारी ॥८॥
धरमदास पर दाया कीन्ही, सेवक अहैं तुम्हारी ॥९॥

॥ शब्द ५ ॥

साहेब मेटो चूक हमारी ॥ टेक ॥
बार बार मोहिँ डंड भयो है, चूक भई अति भारी ।
अब हम आये निकट तुम्हारे, अब मो तनहिँ निहारी ॥१॥
करुनामय तुम नाम धराये, तुम समरथ अब मेरो ।
ऐसी विपति भई मोहिँ ऊपर, कोइ ना हीत* हमारो ॥२॥
तरसत जीव रहै निस बासर, जानि जनहिँ तुम दौरो ।
अब की चूक छिमा कर साहेब, अब सनमुख ह्वै हेरो ॥३॥
तुम सतगुरू सकल सुख-दाता, सब्द पान दे तारो ।
धरमदास विनवै कर जोरी, करौँ बंदगी तेरो ॥४॥

॥ शब्द ६ ॥

सुरति पर सतगुर धरि दियो बाढ़ ॥ टेक ॥
घर माँ रहौँ रहन नहिँ पावौँ,
घर के लोग मोहिँ देहिँ निकार ॥१॥
बाहर जावँ डाइन इक लागै,
सुनि पावै जिय डाहै मार ॥२॥
ऐसी बाढ़ धरो मोरे साहेब,
जहँ मारौँ तहाँ पल्ले पार ॥३॥
धरमदास पर दाया कीजै,
साहेब कबीर दुख मेटनहार ॥४॥

॥ शब्द ७ ॥

बंदी-छोर विनती सुनि लीजै ॥ टेक ॥
कपट कुटिल अपराधी द्रोही, ठहरावो मन निस्चै ।
नाम तुम्हारा अधम उधारन, ता की दिच्छा दीजै ॥१॥

* हितकारी ।

पाप पुन्न नहिँ जाँचन कीजै, काटि फंद अब दीजै ।
माँगूँ अपन सुभाव दयानिधि, सुनि अनुमान न कीजै ॥२॥
विषै बिनास रहूँ निसु बासर, यह तन छिन छिन छीजै ।
साठ जन्म को हौं अपराधी, अबकी छिमा प्रभु कीजै॥३
सतगुरु नाम मुनींद्र कहाये, साहेब कबीर सुनि लीजै ।
धरमदास विनवै कर जोरी, काटि चौरासी दीजै ॥४॥

॥ शब्द ८ ॥

कब तुम मिलिहौ कंथ कबीर ।
धर्मदास पर दाया कीजै, हंस लगावो तीर ॥१॥
भक्ति अचल औ दृढ़ वैरागा, पूरन ज्ञान गँभीर ।
जती सती संतोषी तुमहीं, सब के दाता धीर ॥२॥
तुम प्रताप परवाह न केहु की, सागर सलिता नीर ।
एक बुंद दयाल मोहिँ दीजै, जाय जीव की पीर ॥३॥
महा कठोर कठिन मन मेरो, हरो ताहि की भीर ।
कामी क्रोधी झूठा लंपट, धास्यो अधम सरीर ॥४॥
सुक्ख करन और दुक्ख हरन तुम, ऐसे मत के धीर ।
ज्ञानमंडन भर्मखंडन, दया सिन्धु कबीर ॥५॥

॥ शब्द ९ ॥

साहेब बूड़त नाव अब मोरी ॥ टेक ॥
काम क्रोध की लहर उठतु है, मोह पवन झकझोरी ।
लोभ मोरे हिरदे घुमरतु है, सागर वार न पारी ॥१॥
कपट की भँवर परतु है बहुतै, वा मैं बेड़ा अटको ।
काल फाँस लिये है द्वारे, आया सरन तुम्हारी ॥२॥
धरमदास पर दाया कीन्ही, काटि फंद जिव तारी ।
कहैं कबीर सुनो हो धर्मन, सतगुरु सरन उबारी ॥३॥

॥ शब्द १० ॥

बिन दरसन भइ बावरी, गुरु द्यो दीदार ॥ टेक ॥
ठाढ़ि जोहौं तोरी बाट म, साहेब चलि आवो ।
इतनी दया हम पर करो, निज छवि दरसावो ॥१॥
कोठरी रतन जड़ाव की, हीरा लागे किवार ।
ताला कुंजी प्रेम की, गुरु खोलि दिखावो ॥२॥
बंदा भूला बंदगी, तुम बकसनहार ।
धर्मदास अरजी सुनो, भव पार करावो ॥३॥

॥ शब्द ११ ॥

दीना-नाथ दयाल, भक्त की पच्छ करौ ।
सरन आये की लाज, साहेब जन की करौ ॥१॥
नौ दरवाजे बिकार, धार नौका बगै* ।
मोरि सुरत नहीं ठहराय, लगन कैसे लगै ॥२॥
पाँच तत्त गुन तीन का, आदर साजिया ।
जम राखै बिलमाय, तो फंद न फंदिया ॥३॥
तिर्गुन फाँस का फंदा, माया मद जाल में ।
भवसागर के बीच, महा जंजाल में ॥४॥
भक्ति मुक्ति देव दान, दया जन पर करौ ।
नौका पार लगाय, दास अपनो करौ ॥५॥
साहेब कबीर बंदी-छोर, अरज एक मानिये ।
धर्मनि पतित उबारि, सरन में आनिये ॥६॥

॥ शब्द १२ ॥

चरन छाँड़ि प्रभु जावँ कहाँ, मोरे और न कोई ।
जग में आपन कोइ नहीं, देखा सब टोई ॥१॥

---

* बगदै, बेठिकाने बहै ।

मात पिता हित बंधु तुम, का से दुख रोई।
सब कछु तुम्हरे हाथ है, तुम्हरै मुख जोही ॥२॥
गुन तो मोरे है नहीं, औगुन बहुतेरे।
ओट लई तुम नाम की, राखो पत सोई ॥३॥
सतगुरु तुम चीन्हे बिना, मति बुधि सब खोई।
सब जीवन के एक तुम, दूजा नहिं कोई ॥४॥
मैं गरजी अरजी करौं, मरजी जस होई।
अरज बिपति लिखौं आपनी, राखौं नहिं गोई ॥५॥
धरमदास सत साहेबी, घट घटहिं समोई।
साहेब कबीर सतगुरु मिले, आवागवन न होई ॥६॥

॥ शब्द १३ ॥

साँईं मैं असल गुलाम तिहारा ॥ टेक ॥

काया नगर बन्यो अति सुन्दर, मोह को लग्यो बजारा।
कुमति कलोल करै दसहौं दिसि, लोभ को ठुक्यो नगारा ॥१॥
मोह समुन्दर भरे अपरबल, भँवर भँवैं* अति भारा।
काम क्रोध की लहर उठतु है, केहि बिधि होय निवारा ॥२॥
पाँच के ऊपर पचिस महतिया, इन परपंच पसारा।
मन अदली जहँ अदल चलावै, कहा करै जीव बिचारा ॥३॥
ना मोरे नाव नाहिं खेवटिया, डर लागै मोहिं भारी।
चौदह लोक मैं कोइ नहिं दीसै, तुम गुरु पार उतारी ॥४॥
धरमदास की यही बीनती, उरझे को निर्वारो।
साहेब कबीर मिले गुरु समरथ, हम से अधम उबारो ॥५॥

---

* घूमैं।

॥ शब्द १४ ॥

मैं तो तोरे भजन भरोसे अविनासी ॥ टेक ॥
तीरथ बरत कछू नहिं करहूँ, वेद पढ़ौं नहिं कासी ॥१॥
जंत्र मंत्र टोटका नहिं जानौं, निसु दिन फिरत उदासी ॥२॥
यहि घट भीतर बधिक बसत है, दिये लोभ की टाटी ॥३॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, सतगुरु चरनन दासी ॥४॥

॥ शब्द १५ ॥

साहेब बंदी-छोर हमारे ॥ टेक ॥
ठाढ़े बैठे चलत निहारे, जागत साँझ सबारे।
करुना-सिंधु दया के आगर, नैनन के उँजियारे ॥१॥
बोलत बचन मीठ बहु लागै, पूरन पुरुष पियारे।
उनकी रहनि गहनि जब पैहौ, होइ रहु सब से न्यारे ॥२॥
है वहु ज्ञान ध्यान बहुतेरो, खोलो गगन किवारे।
दया सरूप बसै सिंधू में, हीरा लाल निकारे ॥३॥
साहेब कबीर सदा के सतगुरु, हंसन के रखवारे।
धरमदास पर दाया कीन्हा, आया सरन तुम्हारे ॥४॥

॥ शब्द १६ ॥

साहेब मोरी ओर निहारो।
परजा पुत्र अहौं मैं साहेब, बहुत बात मैं टारो ॥१॥
हौं मैं कोटि जनम को पापी, मन बच करम असारो।
एकौ कर्म छुटे ना कबहूँ, बहु बिधि बात बिगारो ॥२॥
हौं अपराधी बहुत जुगन को, नइया मोर उबारो।
बंदीछोर सकल सुख-दाता, करुनामय करत पुकारो ॥३॥

सीस चढ़ाइ पाप की मोटरी, आयो तुम्हरे द्वारो ।
को अस हमरे भार उतारै, तुमहीं हेतु* हमारो ॥४॥
धरमदास यह बिनती बिनवै, सतगुरु मो को तारो ।
साहेब कबीर हंस के राजा, अमर लोक पहुँचावो ॥५॥

॥ शब्द १७ ॥

साहेब मोरी बहियाँ सम्हारि गही ॥ टेक ॥
गहिरी नदिया नाव झाँझरी, बोझा अधिक भई ।
मोह लोभ की लहर उठत है, नदिया झकोर बही ॥१॥
तुमहिं बिगारो तुमहिं सँवारो, तुमहिं भँडार भरी ।
जब चाहो तब पार लगावो, नहिं तो जात बही ॥२॥
कुमति काटि के सुमति बढ़ावो, बल बुधि ज्ञान दई ।
मैं पापी बहु बेरी चूकूँ, तुम मेरी चूक सही ॥३॥
धरमदास सरन सतगुरु के, अब धुनि लाग रही ।
अमर लोक में डेरा परिगै, समरथ नाम सही ॥४॥

॥ शब्द १८ ॥

साहेब कौन कमी घर तेरो ॥ टेक ॥
भूखे अन्न पियासे पानी, कपड़ा से तन घेरो ।
जो कछु न्यामत सबै महल में, खरच खजाना ढेरो ॥१॥
खाक से पाक कियो पल माहीं, हे समरथ बल तेरो ।
भव से काढ़ि कियो तरनी† पर, खेइ लगावो सबेरो ॥२॥
रहे न घाम छाँह दुनिया में, रहे न जम को चेरो ।
राव से रंक रंक से राजा, छिन में बाजत तूरो ॥३॥
मानो सत्त झूठ जनि जानो, सत्त बचन है पूरो ।
धर्मदास चरनन पर बिनवै, तुम गति सब भरपूरो ॥४॥

---

* हितकारी । † नाव ।

॥ शब्द १९ ॥

साहेब खेइ लगावो पारा ॥ टेक ॥

असी कोस मैं झील अरु झाँकर, असी कोस अँधियारा ।
असी कोस बैतरनी नदिया, जहँवाँ हंस उतारा ॥१॥
बड़े बड़े सीकारी जोधा, आगे पग है डारा ।
खाल खैंचि जम भुसा भरावै, ऐंचि लेहि जस आरा ॥२॥
लेखा माँगै जम फुरमावै, तीन लोक लै डारा ।
उपजत बिनसत जनम बीतिगे, चौरासी की धारा ॥३॥
गगन मँदिल में सतगुरु बोलै, सुनि लै सब्द हमारा ।
धरमदास चरनन पर बिनवै, अब की अरज हमारा ॥४॥

॥ शब्द २० ॥

अब मोहिं दरसन देहु कबीर ॥ टेक ॥

तुम्हरे दरस से पाप कटत हैं, निरमल होत सरीर ॥१॥
अमृत भोजन हंसा पावै, सब्द धुनन की खीर ॥२॥
जहँ देखौं जहँ पाट पटंबर, ओढ़न अंबर चीर ॥३॥
धरमदास की अरज गोसाँईं, हंस लगावो तीर ॥४॥

॥ शब्द २१ ॥

साहेब मोहिं दरसन दीजे हो। करुना-निधि मेहर करीजे हो
पपिहा के चित स्वाँति बसै, भावै नहिं जल दूजा हो ।
जैसे काग जहाज चढ़े, वा को और न सूझा हो ॥१॥
बार बार बिनती करूँ, मेरी अरज सुनीजे हो ।
भवसागर से काढ़ि के, अपना करि लीजे हो ॥२॥
सत्त लोक से सुरत करी, तब जग मैं आये हो ।
जम से जीव छोड़ाइ के, धर्मनि मन भाये हो ॥३॥

॥ शब्द २२ ॥

मोर मन लागा साहेब से, बंदी-छोर कबीरा ॥ टेक ॥
सतगुरु सरनै मैं गई, सब दुख हरि लीन्हा।
करम भरम सब मेटि के, निरमल करि दीन्हा ॥१॥
तीन लोक के बीच मैं, जम कातर दीन्हा।
ता से मोहिँ छुड़ाइ के, आपन करि लीन्हा ॥२॥
सतगुरु सब्द सुनाइ के, पारस करि दीन्हा।
कागा बरन मिटाइ के, हंसा करि लीन्हा ॥३॥
काम क्रोध सब त्यागि के, बन हंस गँभीरा।
सब्द हमारा मानि ले, गुरु कहत कबीरा ॥४॥
धरमदास की बीनती, संतन महँ हेरा।
जाति बरन कुल त्यागि के, सत लोक बसेरा ॥५॥

॥ शब्द २३ ॥

साहेब कौन देस मोहिँ डारा ॥ टेक ॥
वह ते। देस अमर हंसन को, येहि जग काल पसारा ॥१॥
देवहु सब्द अजर हंसन को, बहुरि न ह्वै अवतारा ॥२॥
निरगुन सरगुन दुंद पसारा, परि गये काल की धारा ॥३॥
जहाँ देस है सत्त पुरुष का, अजर अमी का अहारा ॥४॥
धरमदास विनवै कर जोरी, अबकी अरज हमारा ॥५॥

॥ शब्द २४ ॥

साहेब लेइ चलो देस अपाना ॥ टेक ॥
जम की त्रास सही नहिँ जाई, केहि बिधि धरौँ मैँ ध्याना॥१
माया मोह भरम की मोटरी, यह सब काल कलपना ॥२॥
माया मोह भरम सब काटो, दीजै पद निरबाना ॥३॥
अमर लोक वह देस सुहेला, हंसा कीन्ह पयाना ॥४॥
धरमदास विनवै कर जोरी, आवागवन नसाना ॥५॥

॥ शब्द २५ ॥

तुम सतगुरु हम सेवक तुम्हरे ॥ टेक ॥
जो कोइ मारै औ गरियावै, दाद फिरियाद करब तुमहीं से
सोवत जागत के रछपाला, तुमहीं छाँड़ि भजौं नहिं औरै
तुम धरनीधर सब्द अनाहद; अमृत भाव करो प्रभु सगरे॥३॥
तुम्हरी विनय कहाँ लगि बरनौं, धरमदास पद गहे हैं तुम्हरे

॥ शब्द २६ ॥

जमुनियाँ की डारि मोरी तोड़ देव हो ॥ टेक ॥
एक जमुनियाँ के चौदह डारि, सार सब्द लेके मोड़ देव हो १
काया कंचन अजब पियाला, नाम बूटी रस घोर देव हो २
सुरत सुहागिन गजब पियासी, अमृत रस मैं बोर देव हो ॥३
सतगुरु हमरे ज्ञान जौहरी, रतन पदारथ जोरि देव हो॥४॥
धर्मदास की अरज गुसाँई, जीवन की बंदी छोर देव हो ॥५॥

॥ शब्द २७ ॥

मिहरबान है साहेब मेरा । दिल भर दरसन पाऊँ तेरा ॥१॥
तुम दाता मैं सदा भिखारी । देव दीदार जाउँ बलिहारी ॥२॥
करूँ बंदगी खिजमत दीजै । बकसो चूक दया बहु कीजै ॥३॥
सेवक तेँ बिगरै सौ बारा । सतगुरु साहेब लेव उबारा ॥४॥
औगुन सेवक साहेब जानै । साहेब मन मैं ना गिल्यानै॥५॥
धर्मदास लइ तुम्हरि पनाह । अगले पछिले बकस गुनाह॥६

॥ शब्द २८ ॥

बाजा बाजा रहित* का, पड़ा नगर में सोर ।
(मेरे) सतगुरु संत कबीर हैं, नजर न आवै और ॥१॥

* मुक्ति, उद्धार ।

भूमी पर पग धरत हौ, सुनौ संत मतधीर।
माथ नाय बिनती करूँ, दर्सन देव कबीर ॥२॥
घाट बाट औघट महीं, मोहिं कबीर की आस।
धर्मनि सुमिरै नाम गुरु, कभी न होय बिनास ॥३॥

॥ शब्द २९ ॥

अचवन कीजे गुरु कृपा निधान ॥ टेक ॥
सेवक लिये प्रेम जल झारी, खरिका ब्रह्म गियान ॥१॥
भाव भक्ति सोँ बीरा लीजे, संतन जीवन प्रान ॥२॥
अमी उगाल दास को दीजे, जन को परम कल्यान ॥३॥
हृदय कमल बिच पलँग बिछाऊँ, पौढ़ैं पुरुष पुरान ॥४॥
चरन कमल की सेवा करहूँ, दासा-तन परवान ॥५॥
सुरत की बेनियाँ डोलाऊँ ठाढ़ी, इक टक लाऊँ ध्यान ॥६॥
धरमदास पर दाया कीजे, पूरन पद निरबान ॥७॥

॥ भेद का अंग ॥

॥ शब्द १ ॥

धर्मनि वा देस हमारो बासा, जहँ हंसा करै बिलासा ॥टेक॥
सात सुन्न के ऊपर साहेब, सेतै सेत निवासा।
सदा अनंद रहै वा देसा, कबहुँ न लगै उदासा ॥१॥
सूरज चंद दिवस नहिं रजनी, नाहीं धरनि अकासा।
ऐसा अमर लोक है अवधू, केवला फरै बारामासा ॥२॥
ब्रह्मा बिष्नु महेसुर कहिये, छके जोति के पासा।
चौथा लोक बसै जम चौथा, ये सब काल तमासा ॥३॥
उहाँ के गये बहुरि ना अइहौ, आवागवन भय नासा।
ब्रह्म अखंडित साहेब कहिये, आपु मैं आपु प्रगासा ॥४॥

कहैं कबीर सुनो हो धर्मनि, छाँड़ो खल के आसा।
अमृत भोजन हंसा पावै, बैठि पुरुष के पासा ॥५॥

॥ शब्द २ ॥

केहि विधि प्रीतम पाइये, गुरु राह बतावो ॥ टेक ॥
अरध उरध बिच बागिया, तहँ सुरति लगावो।
अष्ट कँवल दल पाँखुरी, उन को बिहसावो* ॥१॥
इँगला पिँगला दोइ हैं, त्रिकुटी मन लावो।
आपन रैयत बसि करो, बैठे अदल चलावो ॥२॥
छज्जा ऊपर बैठि कै, फिर संख बजावो।
सुखमनि हीरा सोधि कै, बाहर चढ़ि आवो ॥३॥
कहैं कबीर धर्मदास से, पद गहु निरबाना।
मनुष जनम दुर्लभ अहै, तन तपन बुझावो ॥४॥

॥ शब्द ३ ॥

चेतो हंसा चेतो कोई, अगम सँदेसा लाये हो।
हम हैं हजूरी अविगति ब्रह्म के, हंस उबारन आये हो ॥१॥
सही छाप सूरति मुख बानी, जग मेँ आनि सुनाये हो।
जीव दुखित देखा संसारा, तेहि कारन पठवाये हो ॥२॥
आवागवन मेँ सब जिव अरुझे, इस्थिर घर नहिँ पाये हो।
आदि अंत इस्थिर लखावन को, समरथ मोहिँ पठाये हो ॥३
अंडज खानी माया बनाई, पिंडज ब्रह्मा सिरजी हो।
उपमज खानि विष्नु जो कीन्ही, अस्थावर सिव साजी हो॥४
ये बटमार भये या जिव के, सबै राखि भरमाई हो।
चेतन अंस पुरुष की भाई, चारो माहिँ भुलाई हो ॥५॥

* खिलावो।

बिन सतगुरु कोइ पार न पावै, फिरि फिरि जोनी झूला हो।
नौ सोहंग परे जिनहीं से, सोई पुरुष निज मूला हो ॥६॥
तीन देँह उनहीं से उपजी, कारन सुछम स्थूला हो।
कारन देँह मैँ सहज सुरति है, औ अंकूर पसारा हो ॥७॥
सुछम देँह मैँ ओहं सोहं, इनको ख़्याल अपारा हो।
स्थिर देँह मैँ अंस है अच्छर, इच्छा उनसे धारा हो ॥८॥
ते अच्छर तेँ जोति निरंजन, सबको करत अहारा हो।
ते जोती मैँ तिन* देव लागे, जाके सृष्टि पसारा हो ॥९॥
सात सुन्न दोइ बेसुन कहिये, दसवाँ धाम अखंडा हो।
समरथ सब्द हमरो अस्थाना, और सकल ब्रह्मंडा हो ॥१०॥
सोरह सुत तेही के माहीं, तेहि बिच पाँचो अंडा हो।
अमर लोक मेँ पुरुष बिदेही, निगम न पावै पारा हो ॥११॥
उनकी उपमा कहँ लगि बरनौं, मुख तेँ होय न पारा हो।
कोटिन सूर चन्द्र तारागन, एक रोम पर वारा हो ॥१२॥
सेत सिँघासन सेत छत्र सिर, सेतहि हंस पियारा हो।
सेत भूमि जहँ सेत वृच्छ है, सेतहि कमल सुहेला हो ॥१३॥
पारस पान लेहु तुम सुकिरित, तब देखो दरबारा हो।
कहैँ कबीर सुनो धर्मदासा, तुम से होइ निरधारा हो ॥१४॥

॥ शब्द ४ ॥

गगन पिय बंसी फेरि बजावो ॥ टेक ॥

भँवर गुफा से उठत चुलबुला, सो अंजन पिय नैन लगावो १
जो बंसी सुर नर मुनि मोहे, सो बंसी पिय मोहिँ सुनावो २
आनो कूँजी खोलो ताला, मोहनि मूरति मोहिँ दिखावो ३
धरमदास विनवै कर जोरी, चरन कँवल तरे मोहिँ लगावो ४

* तीन।

॥ शब्द ५ ॥

झरि लागै महलिया, गगन घहराय ॥ टेक ॥
खन गरजै खन बिजुली चमकै,
लहर उठै सोभा वरनि न जाय ॥१॥
सुन्न महल से अमृत बरसै,
प्रेम अनँद होइ साध नहाय ॥२॥
खुली किवरिया मिटी अँधियरिया,
धन सतगुरु जिन दिया है लखाय ॥३॥
धरमदास विनवै कर जोरी,
सतगुरु चरन में रहत समाय ॥४॥

॥ शब्द ६ ॥

हमैं एक अचरज जानि पड़ै ॥ टेक ॥
जल भीतर इक वृच्छा उपजै, ता मैं अगिन जरै ।
ठाढ़ी साखा पवन झकोरै, दीपक जोति बरै ॥१॥
माथे पर तिरबेनी बहत है, चढ़ि ऊपर असनान करै ।
लरजै गरजै दामिनि दमकै, कामिनि कलस भरै ॥२॥
मट्टी का गढ़ कोट बना है, जा मैं फौज लड़ै ।
सूर वीर कोउ नजरि न आवै, नाहक रार करै ॥३॥
साहेब अमर मरै ना कबहूँ, नाहक सोच करै ।
धरमदास या पद को गावै, फिर कबहूँ न टरै ॥४॥

॥ शब्द ७ ॥

आठ चाम के गुरिया रे, मन माला फेर सबेरिया ॥टेक॥
अमी रस निकसत राग, फाग तंत झनकरिया ।
नाम से और सौदा नहिँ भावै, पिय की मौज लहरिया ॥१॥

मिलहु सत्त सुकृत रस भोगो, होवहु प्रेम पियरिया ।
मीच होहु तन मन धन जारो, जैसे सती सिंगरिया ॥२॥
नव दिसि द्वार तपत लहँ देखो, दसवँ खोल किवरिया ।
पाँच रागिनी झुमक पचीसो, छठएँ धरम नगरिया ॥३॥
अजपा लागि पागि रहै डोरी, निरखो सुरति सुँदरिया ।
धरमदास के साहेब कबीरा, लै पहुँचावो सत्त नगरिया ॥४॥

॥ शब्द ८ ॥

बिरले साधू पावै हो, रतनन कै माला ॥ टेक ॥
मुलुक मँडल चौकी बनी, पूरन धर्मसाला ।
वोहि मँ आपु बिराजै हो, प्रभु दीनदयाला ॥१॥
चाँद सुरज मानिक भये, करु सूरति कै धागा ।
हर दम हर दम फेरो हो, अंतर गुरु माला ॥२॥
पाँच तत्त कै पिँजरा हो, हीरा लागे आस ।
वोहि में साहेब रमि रह्यो, कोटिन भानु प्रकास ॥३॥
नर नारी मँ ढूँढ़ो हो, घट घट में माला ।
कहैं कबीर धर्मदास से, निज होत निहाला ॥४॥

॥ शब्द ९ ॥

खेलत रहलोँ बाबा चौबरिया,
आइ गये अनहार* हो ।
राँध परोसिन भँटहूँ न पायोँ,
डोलिया फँदाये लिये जात हो ॥१॥
डोलिया से उतरो उत्तर दिस धनि,
नैहर लागल आग हो ।
सब्दै छावल साहेब के नगरिया,
जहँवाँ लिआये लिये जात हो ॥२॥

* ले जाने वाला ।

भादोँ नदिया अगम बहै सजनी,
सूझै वार न पार हो ।
अब की बेर साहेब पार उतारो,
फिर न आइब संसार हो ॥३॥
डोलिया से उतरो साहेब घर सजनी,
बैठो घूँघुट टार हो ।
कहैँ कबीर सुनो धर्मदासा,
पाये पुरुष अपार* हो ॥४॥

॥ शब्द १० ॥

अचरज ख्याल हमारे देसवा ॥ टेक ॥
हमरे देसवा बादर उमड़ै, नान्ही परै फोहरिया ।
बैठि रहौँ चौगान चौक मैँ, भीँजै हमरी देँहिया ॥१॥
हमरे देसवा उर्धमुख कुँइया, साकर वा की खोरिया ।
सुरत सुहागिनि जल भरि लावै, बिन रसरी बिन डोरिया ॥२
हमरे देसवा चूनरि उपजै, मँहगे मोल बिकइया ।
की तो लेइहैँ सतगुरु साहेब, की कोइ साध सुजनिया ॥३॥
हमरे देसवा बाजा बाजै, गैबी उठे अवजवा ।
साहेब धरमदास मगन हैं, बैठे तखत परगसवा ॥४॥

॥ शब्द ११ ॥

सब्द सिँहासन पाट मँ, तुम हंसा बैठो जाई हो ॥ टेक ॥
कौन नाम मुक्तामनी हो, कौन नाम वे हंस ।
कौन नाम वे पुरुष हैँ हो, कौन नाम वे अंस ॥१॥
अपर नाम मुक्तामनी हो, अग्र नाम वे हंस ।
ज्ञान नाम वे पुरुष हैँ हो, सुरति नाम वे अंस ॥२॥

* एक लिपि में "अपार" की जगह "पुरान" है ।

मूल दीप निज दीप है हो, तुमहिँ सुनो हम पाँह ।
वैठि हंस उबारिये हो, सोहंगम के बाँह ॥३॥
जम्बू दीप के हंसा भाई, पाँजी बैठो आय ।
कहैँ कबीर धर्मदास से, तुम लावो बाँह चढ़ाय ॥४॥

॥ शब्द १२ ॥

बुढ़िया ने काता सूत, जोलहवा ने बीना हो ।
दरजी ने टुक टुक कीन्ह, दरद नहिँ जाना हो ॥१॥
भेड़ी चरावत बाघ, मूस रखवारा हो ।
मेँगुची* ने बाँधा ताल, सिंह के ठाटा हो ॥२॥
गोड़िया† पसारा जाल, ऊँट एक बाझा हो ।
दुलहिनि के सिर मौर, बिलारी साजा हो ॥३॥
भाँड़ा गढ़त कोँहार, मास दस लागा हो ।
छिनहिँ मेँ जात बिलाय, बिलँब नहिँ लागा हो ॥४॥
यह मंगल सतलोक, हंस जन गावहिँ हो ।
कहैँ कबीर धर्मदास, अमर पद पावहिँ हो ॥५॥

॥ शब्द १३ ॥

मैँ ब्योपारी नाम का, हाटे चल भाई ॥ टेक ॥
जस कुम्हरा कै चाक घुमै, वैसे नर घूमै ।
इँगल पिँगल के मद्ध मेँ, जिन पवन चलाई ॥१॥
बिन रसना रटना करै, नहिँ जीभ डोलाई ।
कसि के बाँधो कामदेव, तब अलख लखाई ॥२॥
पूरब दिस को जाइ कै, खिरकी खोलवावो ।
तिरबेनी के घाट पर, हंसा नहवावो ॥३॥

---

* मेँढकी । † कहार, धीमर ।

तीन लोक दसवाँ दिसा, जम रोके द्वारा।
कहैं कबीर धर्मदास से, हंसा समुझावो ॥४॥

॥ शब्द १४ ॥

सुकृत फूल गुलाब को, सब घट रह्यो समाय।
कहो कैसे कर पाइये, गुरु बिन लख्यो न जाय ॥१॥
तीन त्रिकुट के ऊपरे, फूल सोहंगम फूल।
जहाँ रहो आसन धर्म को, बिन अच्छर निज मूल ॥२॥
चार जोजन के ऊपरे, पुरुष विदेही पूर।
जगर मगर वो नगर है, बाजै अनहद तूर ॥३॥
अपने ढिगे हम खड़े, सतगुरु दियो बताय।
खिड़की खोल देखाइया, राह गगन की जाय ॥४॥
कहैं कबीर धर्मदास से, परगट दियो जनाय।
जो हंसा चढ़ि जावही, नहिं पुनि आवै जाय ॥५॥

॥ शब्द १५ ॥

हीरा झलकै द्वार पर, निरखै कोइ सूरा हो ॥ टेक ॥
जिमीं आसन है संत को, बैठे हहिं धीरा हो।
सुन्न समाधि लगाइ के, पहुँचे वहि तीरा हो ॥१॥
बाजै बिरहिन बाँसुरी, सुनि के गइ पीरा हो।
आठ पहर नौबत झरै, अति गरुअ गँभीरा हो ॥२॥
गंग जमुन के बीच मैं, एक झिरहिर नीरा हो।
पूरब से पच्छिम भये, अति गगन गँभीरा हो ॥३॥
यह हीरा अनमोल है, सब के घट पूरा हो।
कहहिं कबीर धर्मदास से, पायो पद पूरा हो ॥४॥

॥ मंगल ॥

॥ शब्द १ ॥

सतगुरु के उपदेस, फिरो घन बांवरी ।
उठि चलो आपन देस, इहै भल दाव री ॥१॥
हम कहि दिया है सनेस, तुम्हारे पीव का ।
बिनु समुझे नहिँ काज, आपने जीव का ॥२॥
जुगन जुगन हम आइ, कहा समुझाइ कै ।
बिनु समुझे धनि परिहौ, काल मुख जाइ कै ॥३॥
काम क्रोध मद लोभ, छाँडु सब दुंद रे ।
का सोवै दिन रैन, बिरहिनी जागु रे ॥४॥
भव सागर की आस, छाँडु सब फंद रे ।
फिरि चलु आपन देस, यही भल रंग रे ॥५॥
सुन सखि पिय कै रूप, तो बरनत ना बने ।
अजर अमर तो देस, सुगँध सागर भरे ॥६॥
फूलन सेज सँवार, पुरुप बैठे जहाँ ।
ढुरै अग्र कै चँवर, हंस राजै जहाँ ॥७॥
कोटिन भानु अँजोर, रोम एक में कहा ।
ऊगे चन्द्र अपार, भूमि सोभा जहाँ ॥८॥
सेत बरन वह देस, सिँहासन सेत है ।
सेत छत्र सिर धरे, अभय पद देत है ॥९॥
करो अजपा कै जाप, प्रेम उर लाइये ।
मिलो सखी सत्त पीव, तो मंगल गाइये ॥१०॥
जुगन जुगन अहिवात*, अखँड सो राज है ।
पिय मिले प्रेमानंद, तो हंस समाज है ॥११॥

* सोहाग ।

कहैं कबीर पुकार, सुनो धर्मदास हो।
हंस चले सतलोक, पुरुष के पास हो ॥१२॥

॥ शब्द २ ॥

खोजहु संत सुजान सो मारग पीव को।
समुझि सब्द देहु स्रवन, मूल जहँ जीव को ॥१॥
भव सागर अगम अथाह, लहर विकरार है।
कठिन है पाँचो* मार्ग, बिचे जम धार है ॥२॥
सिव संकर औ ब्रह्मा, पार न पावहीं।
यह बहिया बल जोर, संत पार लगावहीं ॥३॥
देहिँ नाम निज डोरि, तो दुख बिसरावहीं।
बिन जल लहर अनूप, मोती झलकावहीं ॥४॥
मारग पंथ सिधार, तो आरति साजहीं।
देहिँ छत्र उँजियार, तो लोक सिधावहीं ॥५॥
बैठे अनहद महल, प्रेम गुन गावहीं।
सँग में सुमति सयानी, तो नेह लगावहीं ॥६॥
सतगुरु जग में आइ, तो जीव चेताइया।
सार सब्द लखवाइ, तो लोक पठाइया ॥७॥
का लै पान खियाउँ, तो तिनका तोरही।
कवन सब्द की ओट, सो नरियर मोरही ॥८॥
संत अंक लिखि दीन्ह, तो पान खियावही।
सार सब्द की ओट सो, नरियर मोरही ॥९॥
नरियर भेद अगम्म, बंस जन मोरही।
कहैं कबीर धर्मदास, जिवन बँदि छोरही ॥१०॥

* पंच दूत।

॥ शब्द ३ ॥

सतगुरु सनमुख बैठि के, मंगल गाइये ।
मन वच क्रम करि ध्यान, चरन चित लाइये ॥१॥
मंगल एक अनूप, संत जन गाइये ।
उपजत आतम ज्ञान, प्रेम पद पाइये ॥२॥
चंदन अँगना लिपाइ के, चौक पुराइये ।
मोतियन थार भराइ के, कलस धराइये ॥३॥
सतगुरु विप्र बोलाइ कें, लगन सोधाइये ।
हीरा हंस बिठाइ के, नाम सुनाइये ॥४॥
जो कल भग्ति विवेक, प्रेम पद पाइये ।
सजन सहित परिवार, तो लोक सिधाइये ॥५॥
मेटे कर्म के अंक, जाहि गुरु ज्ञान भै ।
तजो पखँड अभिमान, तो दुरमति दूरि कै* ॥६॥
यह मंगल सतलोक, हंस जन गावहीं ।
कहैं कबीर धर्मदास, अमर पद पावहीं ॥७॥

॥ शब्द ४ ॥

चलो सोहंगम नारि, प्रीत पिय से करी ।
झूठा है संसार, तो तामस परिहरी ॥१॥
दिना चारि को रंग, संग नहिं जाइया ।
यह तो रंग पतंग, नहीं ठहराइया ॥२॥
पाँच चोर वड़ जोर, कुसँगि एते घने ।
इन ठगियन के संग, मुसै घर निसु दिने ॥३॥
जग सोवत दिन रैन, मुसै घर आइ कै ।
आपु भये कोतवाल, भली विधि लूटिये ॥४॥

* किया ।

इन ठगियन को पकरि, जो कोई लीजिये ।
जोर करैं तब हाथ, छोड़ि नहिँ दीजिये ॥५॥
चार कोस लै गाँव, ठाँव एको नहीं ।
द्वादस नगर मँझार, जो पुरुष विराजहीं ॥६॥
सोभा अगम अपार, पुरुष को ध्याइये ।
द्वादस नगर मँझार, दरस सुख पाइये ॥७॥
कहैं कबीर धर्मदास, सोई पिय चीन्हिये ।
सुरति निरति लै, गैल बहुरि नहिँ फेरिये ॥८॥

॥ शब्द ५ ॥

यह जिव रहत भुलाइ, घने दिन चार को ।
बाँह पकरि सतगुरु की, चलो भव पार को ॥१॥
तेजि* कुमति बेकार, सुमति गहि लीजिये ।
सतगुरु सरन सम्हार, चरन चित दीजिये ॥२॥
गहि सतगुरु के चरन, चलो भव पार को ।
बहुरि न मिलना होय, पीर हरो जीव को ॥३॥
चलहु आपने देस, पुरुष बल जोर लइ ।
लाँघो अवघट घाट, कँवल छबि छाजई ॥४॥
गगन गुफा के घाट, निरंजन भेँटिये ।
चीन्हो कलसा जाइ, अगम तहँ गम किये ॥५॥
निरंकार निज रूप, सो हिरदे देखिये ।
अगम महल में जाइ, पिया जहँ भेँटिये ॥६॥
पुहुप दीप के मद्ध, पुरुष का नूर है ।
कहैं कबीर धर्मदास, सोई भरपूर है ॥७॥

* तजि कर ।

॥ शब्द ६ ॥

चलो हंसा सतलोक हमारे, छाँड़ो यह संसारा हो।
यह संसार काल जम फंदा, कर्म का जाल पसारा हो ॥१॥
चौदह लोक वसत वा के मुख मैं, सब को करत अहारा हो।
जारि भूँजि कोइला करि डारै, फिर फिरि दै औतारा हो॥२॥
ब्रह्मा बिष्नु सिव देँह धरि आये, उन कै कौन बिचारा हो।
सुर नर मुनि सब छल बल मारे, लै चौरासी डारा हो ॥३॥
मद्ध अकास आपु जहँ बैठे, सेत सरूप अकारा हो।
उन कै रूप कहाँ लगि बरनौं, संख भान उँजियारा हो ॥४॥
नौ मुकाम दसएँ अस्थाना, जहाँ बसै पुरुष पुराना हो।
कोटि चाँद सूरज छिपि जैहै, एक रोम परगासा हो ॥५॥
सेत सरूप सब्द जहँ फूले, हंसा करत बिहारा हो।
जो जो सरनि गहे सतगुरु के; उन कै होत उबारा हो ॥६॥
वोहि देसवा एक अजर वस्तु है, बरसत अमृत धारा हो।
कहैं कबीर सुनो धर्मदासा, लखो पुरुष दरबारा हो ॥७॥

॥ शब्द ७ ॥

सतगुरु सरन मैं आइ, तो तामस त्यागिये।
ऊँच नीच कहि जाय, तो उठि नहिँ लागिये ॥१॥
उठि बोलै रारै रार, सो जानो घींच* है।
जेहि घट उपजै क्रोध, अधम अरु नीच है ॥२॥
माला वा के हाथ, कतरनी काँख मैं।
सूझै नाहीं आगि, दबी है राख मैं ॥३॥
अमृत वा के पास, रुचै नहिँ राँड़ को।
स्वान को यही सुभाव, गहै निज हाड़ को ॥४॥

* टैंटी, झगड़ा बढ़ाने वाला।

का मे बात बनाये, परचे नहिँ पीव सेँ।
अंतर का बदफैल, फैल गै जीव सेँ ॥५॥
कहैँ कबीर पुकारि, सुनो धर्म आगरा।
बहुत हंस लै साथ, उतरो भव सागरा ॥६॥

॥ शब्द ८ ॥

पढ़ सुगना सत नाम, बैठ तन ताख मेँ।
चार दिना का रंग, मिलै तन खाक मेँ ॥१॥
लावहु तेल फुलेल, काया है चाम की।
अर्द गर्द मिलि जाय, दोहाई सत नाम की ॥२॥
नीब न मीठी होय, सींचे गुड़ घीव से।
जा कर जौन सुभाव, छुटै नहिँ जीव से ॥३॥
जहँ सौदागर होय, तहाँ कछु भाखिये।
बिन गाहक बिन मोल, वस्तु ना खोलिये ॥४॥
चौमुख दीपक बारि, महल बिच सोइये।
नौ नारी से नेह, भक्ति बिन रोइये ॥५॥
चेतहु संत सुजान, तो जम से राढ़ि है।
काल के हाथ गुलेल, तड़ाका मारिहै ॥६॥
धरती है मस्तूल, तंबु असमान है।
नौ लख जरत मसाल, सीढ़ी बंकनाल है ॥७॥
आगम कहैँ कबीर, सुनो धर्म आगरा।
बहुत हंस लेइ साथ, उतरो भव सागरा ॥८॥

॥ शब्द ९ ॥

चढ़ि अमवा की डारि, अकेली धन का रे खड़ी।
चले जाव मुरुख गँवार, मोरी तोहि का रे पड़ी ॥१॥

की तोरी सासू दारुनिया, की नैहर दूर बसै।
की तोरे पिय परदेस, जोहत वा की बाट खड़ी ॥२॥
ना मोरी सासु दारुनिया, न नैहर दूर बसै।
हमरे बलम परदेस, जोहत वा की बाट खड़ी ॥३॥
पचरँग पहिरु चुनरिया, ऊपर धरो आरसी।
सतगुरु संग सुजान, समुझै मोर पारसी ॥४॥
यह मंगल सतलोक, हंस जन गावहीं।
कहैं कबीर धर्मदास, प्रेम पद पावहीं ॥५॥

॥ शब्द १० ॥

चढ़ि नौरँगिया की डार, कोइलिया बोलै हो।
अगम महल चढ़ि चलो, जहाँ पिय से मिलो ॥१॥
मिलि चलो आपन देस, जहाँ छबि छाजई।
सेत सब्द जहँ खिले, हंस होइ आवही ॥२॥
अग्र वस्तु मिलि जाय, सब्द टकसार हो।
चहुँ दिस लागी झलरिया, तो लोक असंख हो ॥३॥
अंबु दीप एक देस, पुरुष जहँ रहहिं हो।
कहैं कबीर धर्मदास, बिछुरन नहिं होइ हो ॥४॥

॥ शब्द ११ ॥

साहेब पतिया पठाये, सो हंसा बाँचे हो।
पाती बाँचि घर जावो, पुरुष के पासे हो ॥१॥
ज्ञान रंग पालान, सुरति की काठी हो।
अनहद सब्द सवार, अनँत कला सोभा हो ॥२॥
कामिनि करहि सिँगार, हंसा सुनु बानी हो।
आवो पलँग चढ़ि बैठो, तो दरसन देहु हो ॥३॥

हंसा सब्द विदेह, रूप नहिँ रेखा हो।
कामिनि रहत लजाय, सोभा निजु देखा हो ॥४॥
धर्मराय उठि बोले हंसा सुनि लेहु हो।
कहँ को कियो है पयान, सो कहो समुझाइ हो ॥५॥
तब हंसा अस बोले, सुनो धर्मराय हो।
पाये पुरुष के पान, तो लोक के जाइब हो ॥६॥
तब धर्मराय पुनि बोले, हंसा सुनि लेहु हो।
जाहु पुरुष के पास, सीस पगु देहु हो ॥७॥
मानसरोवर ताल, जहाँ अमी सागर हो।
हंसा करै बिसराम, तो अग्र उजागर हो ॥८॥
अमर लोक एक दीप, तो सोभा सुहेल हो।
तहँ हंसन कै बास, सुरति मिलि खेलै हो ॥९॥
अनहद धाम अचिंत, पुरुष जहँ छाजै हो।
अमर लोक निज धाम, हंसन के देसा हो ॥१०॥
कहैं कबीर पुकारि, सुनो धर्मदासा हो।
वह तो अगम अगाध, पहुँचे कोइ हंसा हो ॥११॥

॥ शब्द १२ ॥

सूतल रहलौं मैं सखियाँ, तो बिष कर आगर हो।
सतगुरु दिहलैं जगाइ, पायौं सुख सागर हो ॥१॥
जब रहली जननी के ओदर*, परन सम्हारल हो।
जब लौं तन में प्रान, न तोहि बिसराइब हो ॥२॥
एक बुंद से साहेब, मँदिल बनावल हो।
बिना नँव के मंदिल, बहु कल लागल हो ॥३॥

* मा के पेट यानी गर्भ में।

इहवाँ गाँव न ठाँव, नहीं पुर पाटन हो।
नाहिन बाट बटोही, नहीं हित आपन हो ॥४॥
सेमर है संसार, भुवा उधराइल हो।
सुंदर भक्ति अनूप, चले पछिताइल हो ॥५॥
नदी वहै अगम अपार, पार कस पाइव हो।
सतगुरु बैठे मुख मोरि, काहि गोहराइव हो ॥६॥
सत्तनाम गुन गाइव, सत ना डोलाइव हो।
कहैं कबीर धर्मदास, अमर घर पाइव हो ॥७॥

॥ शब्द १३ ॥

धनुप बान लिये ठाढ़, जोगिनि एक माया हो।
छिनहिँ मैँ करत विगार, तनिक नहिँ दाया हो ॥१॥
झिर झिर बहै बयार, प्रेम रस डोलै हो।
चढ़ि नौरँगिया की डार, कोइलिया बोलै हो ॥२॥
पिया पिया करत पुकार, पिया नहिँ आया हो।
पिय विनु सून मँदिलवा, बोलन लागे कागा हो ॥३॥
कागा हो तुम कारे, कियो बटवारा* हो।
पिया मिलने की आस, बहुरि ना छूटहि हो ॥४॥
कहैं कबीर धर्मदास, गुरू सँग चेला हो।
हिलि मिलि करो सतसंग, उतरि चलो पारा हो ॥५॥

॥ शब्द १४ ॥

सखि अनहद धाम निवास, सो देखो ये घड़ी।
तहँ पहुँचै कोइ दास, सो देखो० ॥१॥
सुख कोइ एक सर हंस, सो देखो०।
परखि गहो निज नाम, सो देखो० ॥२॥

* वारह बाट यानी बेठिकाने या इधर उधर।

जन्म जन्म दुख मिटे, सो देखो० ।
लइ राखो निज धाम, सो देखो० ॥३॥
अछय वृछ के डहर समाय, सो देखो० ।
सत्त नाम परताप, सो देखो० ॥४॥
हंसा निज घर चले, सो देखो० ।
काल रहा मुरझाय, सो देखो० ॥५॥
अधर दुलीचा अमर पद, सो देखो० ।
सतगुरु दिया बिछाय, सो देखो० ॥६॥
धर्मनि मिले कबीर, सो देखो० ।
हिलि मिलि करहि कलोल, सो देखो० ॥७॥

॥ शब्द १५ ॥

गुन कर बौरी, जब लौं नैहर माहिँ हो ।
फिरि जैहो ससुरारि, पिया के पास हो ॥१॥
जब लगि राज पिया कर, तू सुख करि ले हो ।
सासु ननदिया दारुनि, उत्तर जनि देहु हो ॥२॥
सतगुरु डोलिया फँदावल, लगे चार कहार हो ।
आगे चले मोर साहेब, पाछे चालनहार हो ॥३॥
जाइ उतारे वोहि देसवाँ, जहँ दिस न दुवार हो ।
मोतियन चुनि घर बने, हीरा लगे किवार हो ॥४॥
चंद्र लगन मोर अँचरा, सुरज लगन मोर दँह हो ।
हृदे लगन मोरा साहेब, जहँ लगि फैले दृष्टि हो ॥५॥
मन मन बिहँसै दुलहिनि, अमर वर पाये हो ।
साहेब कबीर कै दिहल, सुनि ले धर्मदास हो ॥६॥

॥ शब्द १६ ॥

मेहीं मेहीं बुकवा पिसावो, तो पिय के लगावो हो।
सुरति सोहंगम नारि, तो दुरमति छाँड़ो हो ॥१॥
घटहि में मानसरोवर, घाट बँधावो हो।
घटहि में पाँच कहार, दूलह नहवावहिँ हो ॥२॥
घटहि में नेह नउनिया, तो चरन पखारहिँ हो।
प्रेम प्रीत के ललना, तो पलना झुलावहिँ हो ॥३॥
घटहि में दया के दरजी, तो दरज मिलावहिँ हो।
पाँच तत्त के जामा, दुलह पहिरावहिँ हो ॥४॥
घटहि में लोह लोहार, तो कँगना ढावहिँ* हो।
तीन गुनन के सेहरा, दुलह पहिरावहिँ हो ॥५॥
घटहि में चंदन चौक, तो चौक पुरावहिँ हो।
सत्त सुकृत को कलसा, तहाँ धरावहिँ हो ॥६॥
घटहि में मन सत माली, तो मौर ले आवहि हो।
घटहि में जुगति कै जौहरि, जोत पहिरावहि हो ॥७॥
घटहि सोहंगम नारि, तो पिय को रिझावहि हो।
बार बार गुरु झगरि, तो अरज सुनावहि हो ॥८॥
यह मंगल सतलोक, हंस जन गावहि हो।
कहैं कबीर धर्मदास, बहुरि नहिँ आवहि हो ॥९॥

॥ शब्द १७ ॥

सतगुरु सगुन धरावो मोरे बाबा,
हम भइँ ब्याहन जोग हो।
तन मन सबै प्रेम रस माते,
हँसै नैहर के लोग हो ॥१॥

* ढाहना=धातु को गला कर गढ़ना।

बाम्हन बेगि पठावो मोरे बाबा,
देखि आवै वोहि देस हो।
रवि ससि तारा दिवस न रजनी,
बसै अलख अलबेल हो ॥२॥
कर पगु पीठ पेट नहिं काया,
हम से कहा न जात हो।
अस बर लिखा लिलार हमारे,
बाम्हन कहु तहँ जाइ हो ॥३॥
बंध झलरिया बँदी झलकै,
चंद सुरज के पार हो।
मानिक दियना तहवाँ झलकै,
जगमग जोति अपार हो ॥४॥
बिना सुरत संसारहि निरखै,
बिन मुख बोलनहार हो।
स्रवन नैन बिनु सुनै औ देखै,
आसन अधर अधार हो ॥५॥
प्रेम प्रीत से खंभ गड़ावो,
गैबी अलँब* बिछावो हो।
कनक कलस धरि मंगल गावो,
मोतियन झालरि लाव हो ॥६॥
दुलहिनि दुलहा ब्याहन आये,
भये दोऊ एक ठौर हो।
भया वियाह उछाह परम पद,
भये उर सत्त उचार हो ॥७॥

* सहारा, भरोसा।

पाये सोहाग माँग भर सेंदुर,
नखसिख सोरहो सिँगार हो।
फूल जड़ित रतनन से राजित*,
बँदी झलकै लिलार हो ॥८॥
सुखमनि पलँग बिछावो सखियाँ,
पद्मन धुनि झनकार हो।
अब का सोवो उठि जागो धनियाँ,
आखिर करो सम्हार हो ॥९॥
बिनति करूँ मैं चरन कँवल में,
सुनो मोरे प्रान-नाथ हो।
धरमदास के सतगुरु समरथ,
तोहरे हाथ निबाह हो ॥१०॥

॥ शब्द १८ ॥

हमरा बियाह करो मोरे बाबा,
तुम सोँ नाहिँ निबाह हो।
जिन के नाहिँ रूप औ रेखा,
उन से हमरो बियाह हो ॥१॥
आवे न जाय मरै ना जीये,
सो वर खोजो जाई हो।
बूढ़ न बार तरुन नहिँ चेलिका†,
वा को तिलक लगाई हो ॥२॥
गगन मँदिल वह गढ़ मोरे बाबा,
अरध उरध के बीच हो।
पवन बराती ब्याहन आये,
मान करो सनमान हो ॥३॥

* शोभित। † नौजवान।

तिरबेनी से नीर मँगावो,
अछय बृच्छ कै डार हो।
सत्त सुकृत कै कलस धरावो,
पूजो पाँव हमार हो ॥४॥
तिरगुन सेँदुरा मँगावो मेरे बाबा,
पिय से माँग भराइ हो।
सतगुरु बिप्र के चरन पखारो,
जुग जुग रहै सोहाग हो ॥५॥
सब्द सुरत से गाँठ जुरावो,
माँड़ो राखो छाइ हो।
पाँच भँवरिया घुमाओ मेरे बाबा,
गँठिया देवो निवुकाइ हो ॥६॥
चाँद सुरज दोउ कोहबर बाबा,
पाँजी* दसो दुवार हो।
ऊँच दुवारी निहारो सखियाँ,
निहुरि कै घर को जाहु हो ॥७॥
ज्ञान के डोलिया फँदावो मोरे बाबा,
करि देवो बिदा हमार हो।
धरमदास से छुटल भव सागर,
सब सोँ भेँटि अकवार हो ॥८॥

॥ शब्द १९ ॥

चलो सखि देखन चलिये, दुलह कबीर हैँ।
उन सोँ जुरल सनेह, जठर सोँ राखिहैँ ॥ टेक ॥

* रास्ता।

पाँच तत्त को बासा, त्यागो बेगि कै।
छाँड़ो झिलि मिलि नेह, पुरुष गम राखि कै ॥१॥
लाँघो औघट घाट, पंथ निज ताकि कै।
गहो सुकृत निज डोर, अगम गम राखि कै ॥२॥
चार कोस आकास, तहाँ चढ़ि देखिये।
आगे मारग झीनि, तो सुरत विवेकिये ॥३॥
मुकुट एक अनूप, छत्र सिर साजिहै।
ढुरत अग्र को चौंर, सब्द धुनि गाजिहै ॥४॥
सेत धुजा फहराय, भँवर तहँ गूँजहीं।
नितहिँ उठै झनकार, गगन घनघोरहीं ॥५॥
कहैं कबीर धर्मदास सोँ, मूल उचारिये।
आगम गम्य बताइ कै, हंस उबारिये ॥६॥

॥ शब्द २० ॥

[प्रश्नोत्तर]

सत्त सुकृत सतनाम, सो आदि मनाइये।
लीजै साहेब को नाम, प्रेम पद पाइये ॥१॥
सुरति नहीं बिलगाइ, तो मुक्ती होइ हो।
चलो हंसा वहि देस, बसै जहँ पीव हो ॥२॥
चाँद सुरज के पूरब*, हंसा पच्छिम हो।
वोहि देसवाँ मत जाव, बसै जहँ पंछी† हो ॥३॥
चाँद सुरज के दक्खिन, हंसा उत्तर हो।
खोलो मुक्ति दुवार, उतरि चलो पार हो ॥४॥
तीन सै साठ कड़िहार‡, काल जम जार हो।
उन के बार जनि भूलो, भवसागर धार हो ॥५॥

* ऊपर। † शरीर-बद्ध जीव। ‡ मल्लाह।

बिहसैं सब सखियाँ, तो रानी* मनाइहै ।
रानी देहु बकसीस, हंसा गहि आनौं हो ॥६॥
[रानी]–जो तुम सखियाँ सयानी, हंसा गहि आनो हो ।
सात दीप नौ खंड की, रानी कहावौं हो ॥७॥
[सखी]–हो हंसा तुम ठाढ़, कहाँ को जाइब हो ।
सात दीप नौ खंड की, रानी छाँड़ि हो ॥८॥
[हंस]–सात दीप नौ खंड बसै, बकवादिन हो ।
ठाकुर† मति के हीन, कर्म बस बाँधा हो ॥९॥
स्याम रंग पहिराव, कुसुम रँग सारी हो ।
मानो मेघ घन गरजि, उमँगि दल बादल हो ॥१०॥
चलि जाहु नारि गँवारि, तुँ जगत पियारी हो ।
चित्रगुप्त दुर्ग‡ दानी की, रहो दुलारी हो ॥११॥
[सखी]–हो हंसा तुम ठाढ़, कहाँ के जाइब हो ।
सन्मुख होइ कै देखो, तो करहुँ जवाब हो ॥१२॥
स्याम रंग पहिराव, कुसुम रँग चुनरी हो ।
कठिन कला छवि झलकै, तौ काल दुलारी हो॥१३॥
मैं तोहि पूछौं हंसा, कहाँ तोरे बाप हो ।
हम से कहो समझाय, कहा करे पाप हो ॥१४॥
[हंस]–सत साहेब जो पिता, तो सतगुरु माता हो ।
चित्रगुप्त दुर्गदानी, सो येहि बिधि जाता हो ॥१५॥
सब सखि माथ नवायो, तो हंसा चलि भे हो ।
आगे मिले धर्मराय, काल सिर नाये हो ॥१६॥

* रानी से मतलब माया और सखियों से माया की शक्तियाँ ।
† काल । ‡ दुर्ग=कठिन । दुर्ग-दानी नाम काल का है ।

अचिंत पुरुष को मंगल, हंसा गावै हो ।
कहैं कबीर धर्मदास, अमर पद पावै हो ॥१७॥

॥ बधावा ॥

॥ शब्द १ ॥

पधारो साहेब पाहुना, मेरे मन में बहुत अनंद ॥टेक॥
सखि का से पोताऊँ आँगना, का से पोताऊँ चौक ॥१॥
चँदन पोताऊँ आँगना, गजमोतियन पुराऊँ चौक ॥२॥
सखि आँगन बोऊँ लायची, मेरे फलसी नागर बेल ।
पधारो साहेब पाहुना ॥३॥
ऊँची चढ़ कर जोवती, साहेब का रथ केती दूर ॥४॥
ऊँची लहर समुद्र की, तल बहै जमुना का नीर ॥५॥
भलि भई साहेब आइया, बाजत अनहद घोर ॥६॥
कनक सिंहासन बैठका, ओढ़न अंबर चीर ॥७॥
सखि भवसागर हेरिया, लह्यो सुख सागर तीर ॥८॥
धरमदास की बीनती, मोहिं मिलियो साहेब कबीर ॥९॥

॥ शब्द २ ॥

बधावा संत सजाऊँ हो ।
जा विधि सतगुरु मेहर करैं, सोई विधि लाऊँ हो ॥ टेक ॥
रतन पटोरा* डारि पाँवड़ा†, सन्मुख जाऊँ हो ।
सब सखियाँ मिलि बाँटत बधाई, मंगल गाऊँ हो ॥१॥
घसि घसि चंदन अँगना लिपाऊँ, चौक पुराऊँ हो ।
मेवा नरियर पान मिठाई, संजम सबै मँगाऊँ हो ॥२॥

---

* कपड़ा । † क़ालीन या बढ़िया कपड़ा जो बड़े आदमियों के चलने के लिये बिछाया जाता है।

खीर खाँड़ घृत अमृत भोजन, संत जिमाऊँ हो।
चरन धोइ चरनामृत लेऊँ, सीस नवाऊँ हो ॥३॥
जब मोरे साहेब तखत बिराजैं, आरति लाऊँ हो।
पान पर्वान दया से पाऊँ, सब मिलि गाऊँ हो ॥४॥
जब मोरे सतगुरु पलँग पधारैं, चरन दबाऊँ हो।
धरमदास याही बिधि करि, सतलोक सिधाऊँ हो ॥५॥

॥ शब्द ३ ॥

साहेब सतगुर घर आया हो।
अँगना मोर जगमग भया, सुख सम्पति लाया हो ॥१॥
आधि* गई मेरी हे सखी, आज सज्जन पाया हो।
धन्य बिधाता लेख लिखा, निज भाग जगाया हो ॥२॥
कोमल बचन अँग दया घनेरी, कल्प बृच्छ की छाया हो।
धन जननी अस संत जिन जाया, अनँद बधाया हो ॥३॥
जप तप नेम धर्म बहु कीन्हा, रसना नामहिँ गाया हो।
धरमदास सतगुरु सतसँग से, छिन में परम पद पाया हो ॥४

॥ शब्द ४ ॥

सतगुरु आये द्वार, मन में बजत बधाइया।
सतगुरु साहेब दीन-दयाला, द्वारे मोरे आइया।
जुगन जुगन के करम मिटत भे, सतगुरु दरस दिखाइया ॥१॥
प्रेम सुरत की करी रसोई, व्यंजन† आसन लाइया।
जैंवन बैठे सतगुरु साहेब, अधर से चौंर डोलाइया ॥२॥
दया भाव के पलँग बिछाये, प्रेम दुलीचा लाइया।
ता पर सोये सतगुरु साहेब, सुरति कै तेल लगाइया ॥३॥

---

* मानसी दुक्ख ; चिन्ता। † भोजन।

धरमदास विनवै कर जोरी, सुनिये समरथ साँइया ।
साहेब कबीर प्रभु मिले विदेही, झीना दरस दिखाइया ॥४॥

॥ शब्द ५ ॥

आज आनंद भये मेरे घर, निरगुन संत पधारे हो ॥टेक॥
घसि घसि चंदन अँगना लीपाओँ, गजमोतियन चौक पुराओँ हो।
कनक रतन का कलस मँगाओँ, हीरा जड़ाव की झारी हो ॥२
सतगुरु तो सिंहासन बैठे, सब्द का चँवर ढुराओँ हो ॥३॥
धरमदास की अरज गोसाँईं, मंगलचार नित गाओँ हो॥४॥

॥ शब्द ६ ॥

मोरे आये संत सनेही, धन धन घड़ी आज की हो ॥टेक॥
अतर फुलेल न्हवावौँ सजनी, केसरि तिलक लगाओँ हो ॥१
धूप दीप नैबेद आरती, फूल माल पहिराओँ हो ॥२॥
जिनके दरस होय सब काजा, तरसै राना राजा हो ॥३॥
सत्त सब्द जहँ होय प्रकासा, अस कबीर धर्मदासा हो ॥४॥

॥ शब्द ७ ॥

आज घर आये साहेब मोर ॥ टेक ॥
हुलसि हुलसि धन अँगना बुहारे, मोतियन चौक पुराई ॥१॥
चरन धोय चरनामृत लीन्हा, सिंहासन बैठाई ॥२॥
पाँच सखी मिलि मंगल गावैं, सब्द मेँ सुरति समाई ॥३॥
बाँधोगढ़ के आमिन* विनवै, धनि हो कबीर गोसाँईं ॥४॥

---

* धर्मदासजी की स्त्री का नाम ।

॥ बारहमासा ॥

धर सत्य पुरुप का ध्यान, तुम्हारी पूरन है आसा ॥टेक॥
पिरथम मास असाढ़ जो लागे, सोधो काया को ।
बाहर दृष्ट कहाँ सो आया, भीतर छाया को ॥
पंच का नगर बसाया को ।
नख सिख से रचि नैन नासिका, इसे बनाया को ॥
उसी का खोज करो बासा ॥१॥

सावन सार नाम निज जपि ले, यह जप अपने से ।
कर नहिं हलै न डोलै जिभ्या, सोहं जपने से ॥
काल नहिं ब्यापै सुपमनि से ।
इँगल पिंगल के मारग की, तुम डोर गहो मन से ।
नाम सोहंग जपो स्वाँसा ॥२॥

भादौं भर्म मेटि सतगुरु की सेवा कछु करना ।
गगन गुफा के मारग को, तुम धीरज से चढ़ना ॥
केवाड़े द्वादस हैं लागे ।
वैकुंठ पुरी में, दसम द्वार है, तहाँ जोति जागे ॥
वहाँ नहिं लगै काल फाँसा ॥३॥

क्वार सुमति व्रजराज, कोई जन अंतर ध्यान धरै ।
नाभि कँवल में सुरति लगावै, आतम नजर परै ॥
झलकै दसम दुवारे में ।
अगम अगोचर पुर्ष अविनासी, सुन्न अटारी में ॥
वहाँ नहिं लगै भूख प्यासा ॥४॥

कातिक पप्ट कँवल दल भीतर, अगम जोति दरसै ।
चमकै बिजुली मेघ जो गरजै, अमृत जल बरसै ॥

बिना दल बादल झनकारा ।
उलटि पवन के नीचे होई, बहै अमृत धारा ॥
वहाँ नहिं लागै भी फाँसा ॥५॥
अगहन आसा लगी हमारी, गगन गुफा माहीं ।
वज्र केवारे लगे द्वार में, सहज खुलैं नाहीं ॥
जहाँ कछु हिकमत का काजा ।
उलटि पवन कै ठोकर मारो, खोलो दरवाजा ॥
तिन्हीं का छूटै जम त्रासा ॥६॥
पूस मास में पिया आपना, खोज करो भाई ।
जनम जनम के संसय तुम्हरे, सबै छूटि जाई ॥
लखो घट बीच पिया छाया ।
सतगुरु पूरे किरपा करिके, हमको बतलाया ॥
किया मोरे बैरियन को नासा ॥७॥
लागत माघ अगम की बानी, सुनो संत प्यारे ।
भर्म जाल भौसागर से तुम, रहो सदा न्यारे ॥
गगन में अनहद बाजत है ।
सुन्न महल के भीतर में, सिव सक्ति विराजत है ॥
बने वहँ खूबहि कैलासा ॥८॥
फागुन फाँस लगै नहिं जम की, गहो नाम डोरी ।
पाँच चोर बसे काया माहीं, करत सदा चोरी ॥
कोई की हाँक नहीं मानैं ।
नर नारी औ देवी देवा, सब को भरमाने ॥
काया में साँच करौ बासा ॥९॥
चैत चित्त के मारग को, तुम खोजो दिन राती ।
सुन्न महल में दीपक बारो, बिना तेल बाती ॥

दरस कोइ साधू जन पावै ।
पट चक्कर के खोल केवारा, ऊपर चढ़ि जावै ॥
तहाँ है जगर मगर हंसा ॥१०॥
वैसाख बात कोइ मोरी मानि ले, सब से छोट रहना ।
भला बुरा मत कहो केहू को, भला बुरा सहना ॥
भला तुम छाँड़ि बड़ाई को ।
तामस खीस मत करो जगत में, यह भाव संतन को ॥
बनो तुम दासन के दासा ॥११॥
जेठ जागती जोति की महिमा, परखो संत सुजान ।
अजपा जाप जपो सोहंगम, पावो पद निरबान ॥
सब्द धुन पाँचो लौ लावो ।
गुरु कबीर किरपा तेँ धर्मन, गुन बारह मास गावो ॥
जिन्हों का ज्ञान नगर वासा ॥१२॥

॥ बसंत और होली ॥

॥ बसंत ॥

प्यारे कंत से मिलि खेलौ बिमल बसंत ।
खोलो अँधेरी कोठरी, मन बैठौ महल एकंत ॥ टेक ॥
गगन मँदिल दीपक धरो हो, भवन करौ उँजियार ।
छैल छबीले कब मिलिहैँ, मोर जीवन प्रान अधार ॥१॥
गंगा जमुना सरसुती हो, चंद सूर के बीच ।
अर्ध ऊर्ध के मध्य में हो, अमी अरगजा कीच ॥२॥
बिन पग नटवा निरत करत हैं, बिन कर बाजै ताल ।
बिना नयन छबि देखनी हो, बिन सरवन झनकार ॥३॥

सहज सुरंगी रमि रहा हो, हिलि मिलि एकै ठाँव।
धर्मनि भैंटे भाव से हो, साहेब कवीर के पाँव ॥४॥

॥ होली १ ॥

हमरी उमिरिया होरी खेलन की,
पिय मोसों मिलि के बिछुरि गयो हो ॥१॥
पिय हमरे हम पिय की पियारी,
पिय बिच अंतर परि गयो हो ॥२॥
पिया मिलैं तब जियौं मोरी सजनी,
पिया बिन जियरा निकरि गयो हो ॥३॥
इत गोकुल उत मथुरा नगरी,
बीच डगर पिय मिलि गयो हो ॥४॥
धरमदास बिरहिनि पिय पावै,
चरन कँवल चित गहि रहो हो ॥५॥

॥ होली २ ॥

होरी खेलो सयानी, फागुन की ऋतु आनी ॥ टेक ॥
मनुषा जनम बहुरि ना पैहो, साखी वेद पुरानी।
फिर पाछे पछिताहुगी सजनी, परिहौ चौरासी खानी।
फिरौ जुग जुग भटकानी ॥१॥
सील सँतोष के केसर घोरी, छिरकत पिय रुचि मानी।
आतम नारि करत न्यौछावर, तन मन धनहिं लुटानी।
जबै पिया के मन मानी ॥२॥
बाजत ताल मृदंग झाँझ डफ, अनहद घोर निसानी।
पाँच पचीस लिये सँग अबला, गगन में धूम मचानी।
उठै सुर बारहबानी ॥३॥

गगन गली मैं छैंके अबिनासी, मगन भई मुसुकानी ।
भक्ति दान मोहिं फगुआ दीजै, अमर लोक सहदानी ।
मिटै जब आवा जानी ॥४॥
जग के भरम छोड़ दे बौरी, लोक लाज बिसरानी ।
साहेब कबीर मिले मोहिं सतगुरु, धरमदास भल जानी ।
भई निर्भय पटरानी ॥५॥

॥ होली ३ ॥

जग ये दोउ खेलत होरी ।
माया ब्रह्म बिलास करत हैं, एक से एक बरजोरी ॥ टेक ॥
सच्चिदानंद सरूप अखंडित, व्यापक है सब ठौरी ।
हिये नैन से परख परी जेहि, जोति समाय रहो री ॥१॥
जोबन जोर नैन सर* मारत, ठहर सकै को कोरी† ।
मदन प्रचंड उठै चमकारी, काया करी चित चोरी ॥२॥
निरगुन रूप अमान अखंडित, जा मैं गुन बिसरो री ।
माया सक्ति अनंद किया है, सबहि मैं अगर भरो री ॥३॥
कारन सूछम स्थूल देंह धरि, भक्ति हेत तन तोरी ।
धर्मनि बिना दरस गुरु मूरत, कस भव पार भयो री ॥४॥

॥ होली ४ ॥

तुम संतो खेलु सम्हारि, जग मैं होरी मचि रहि भारी ॥टेक॥
जड़ चेतन दुइ रूप बनाये, एक कनक दुजे नारी ।
पाँच पचीस लिये सँग अबला, हँसि हँसि मिलि गावैं गारी१
दुरमति दम्भ‡ गहे कर मैं डफ, हबड़ हबड़ दै तारी ।
तिरगुन तार तँबूरा बाजै, आस तृस्ना गति न्यारी ॥२॥

* बान । † तिरछी चितवन । ‡ कपट ।

चोवा चंदन अविर अरगजा, माया की गहवर भारी ।
षट दरसन पाखंड छानवे, पकरि किये वेगारी ॥३॥
लोभ मोह दुइ भरि पिचुकारी, छूटत वारम्वारी ।
जो कोइ सन्मुख होइ के खेलै, तिनहिं छींट लगै कारी ॥४॥
कुमति गुलाल डारि मुख मींजै, काम पुटरिया मारी ।
सुर नर मुनि अरु पीर औलिया, मींजि रहे संसारी ॥५॥
चतुरन फगुआ दे दे छूटे, मूरख को लगै प्यारी ।
कहैं कवीर सुनो हो धर्मनि, निर्गुन ज्ञान गलि* न्यारी ॥६॥

॥ सोहर ॥

॥ शब्द १ ॥

साहेव मोर वसत अगमपुर, जहाँ गम न हमार हो ॥ टेक ॥
साहेव कै ऊँची अटरिया, तरे विषम वजार हो ।
पाप पुन्न दोउ वनियाँ, हीरा लाल विकाय हो ॥१॥
आठ कुवा नव वावड़ी, सोरह पनिहार हो ।
भरलि गगरिया ढरकि गै, ठाढ़ी धन पछिताय हो ॥२॥
छोट मोट डोलिया चँदन कै, छोटे चार कहार हो ।
लै कै उतारे वोहि देसवाँ, जहाँ दिस न दुवार हो ॥३॥
कहैं कवीर सुनु धर्मन, मेरो वोहि देस हो ।
जो रे गये सो वहुरे नहिं, कस कहत सनेस हो ॥४॥

॥ शब्द २ ॥

जाके दुवरवा जमिरिया सो कैसे सोइल हो ।
महर महर करै फूल, नींद नहिं आइल हो ॥१॥

---

* गली ।

काटौं मैं पेड़ जमिरिया, तौ पलँगा विनाइब हो ।
तेहि पर सोवै मोर साहेब, बेनिया डोलाइब हो ॥२॥
सास मोर सुतल अगरिया* ननद गजओबर† हो ।
सैयाँ मोर सुतल धौरहरिया‡, मैं कैसे जगाइब हो ॥३॥
उठो मोरी लहुरी ननदिया, तुम ठाकुराइन हो ।
पाँच चोर घर मूसैं, तो दियना जगाइब हो ॥४॥
एहि नगरी वसै पिय मोर, तो कोइ न जगावल हो ।
नइहर के अभिमानी, पिया नहिँ चीन्हल हो ॥५॥
इहाँ कै नाच भवनवा, नीक नहिँ लागै हो ।
घटहि मैं एक छिदुनिया§, नाच तहँ देखब हो ॥६॥
छोट मोट पेड़ जमिरिया, तो फुलवा लहर करै हो ।
तेहि तरे बाजन बाजै, तो सब्द सुनावल हो ॥७॥
साहेब कबीर कै सोहर, संत जन गावल हो ।
सूनहु हो धर्मदास, अमर पद पावल हो ॥८॥

॥ शब्द ३ ॥

कहँवाँ से जिव आइल, कहँवाँ समाइल हो ।
कहँवाँ कइल मुकाम, कहाँ लपटाइल हो ॥१॥
निरगुन से जिव आइल, सर्गुन समाइल हो ।
कायागढ़ कइल मुकाम, माया लपटाइल हो ॥२॥
एक बुंद से काया महल उठावल हो ।
बुंद परे गलि जाय, पाछे पछितावल हो ॥३॥
हंस कहै भाइ सरवर, हम उड़ि जाइब हो ।
मोर तोर एतन दिदार, बहुरि नहिँ पाइब हो ॥४॥

* बाहर । † भीतर । ‡ ऊपर । § छेद अर्थात तीसरा तिल ।

इहवाँ कोइ नहिँ आपन, केहि सँग बोलै हो।
बिच तरवर मैदान, अकेला (हंसा) डोलै हो ॥५॥
लख चौरासी भरमि, मनुख तन पाइल हो।
मानुख जनम अमोल, अपन सोँ खोइल हो ॥६॥
साहेब कबीर सोहर गावल, गाइ सुनावल हो।
सूनहु हो धर्मदास, एही चित चेतहु हो ॥७॥

॥ शब्द ४ ॥

खेलत रहलूँ अँगनवाँ, सखी सँग साथी हो।
आइ गवन निगिचाय, बदन भयो धुमिल हो ॥१॥
पहिले गवनवाँ ऐलूँ, पनियाँ के भेजलन हो।
देखि कुवाँ कै रूप, मनै पछितैलूँ हो ॥२॥
कुवाँ भीर भई भारी, तो गागर फूटल हो।
कौन उत्तर घर देँव, हाथ दोउ छूछे हो ॥३॥
घर मोरी सासु दारुनी, तो ननद हठीली हो।
केहि से कहब दुख आपन, संगी न साथी हो ॥४॥
ठाढ़ि मोहारे* धनि सुसुकै, मनै पछताइल हो।
पिया मो से मुखहुँ न बोले, कवन गुन लागल हो ॥५॥
सजन की ऊँची अटरिया, तो चढ़त लजाऊँ हो।
कल नहिँ लेत पहरुआ, कवन विधि जाइब हो ॥३॥
गल गज मोती कै हार, तो दीपक हाथे हो।
झमकि के चढ़लूँ अटरिया, पुरुष के पासे हो ॥७॥
कहैं कबीर पुकारि, सुनो धर्म आगर हो।
बहुत हंस लै साथ, उतरु भव सागर हो ॥८॥

* दरवाज़े पर।

॥ राग गारी १ ॥

देवो न देवो प्रभु जन अपने को,
समरथ के गुन गाओँ किहाँजू ।
गगन मँदिल मोरे सजन बसत हैँ,
उनहुँ को नेवत बोलाओँ किहाँजू ॥१॥

काम क्रोध मद लोभ पाँवड़े*,
भीतर भवन बुलाओँ किहाँजू ।
नयन के जल लै चरन पखारौँ,
चित चौका बैठारौँ किहाँजू ॥२॥

करनी कै पातर कथनी कै दोना,
साखी कै सींक लगाओँ किहाँजू ।
भाव कै भात औ दाल दया कै,
सब्द कै बरा बनाओँ किहाँजू ॥३॥

मनसा मंडे† सरस बनाओँ,
प्रेम कै घिरत चुवाओँ किहाँजू ।
सत कै दूध करनी कै खोवा,
सक्कर सुमति मिलाओँ किहाँजू ॥४॥

सुख पाय जेवैँ सजन हमारे,
स्वाँस कै वायु डोलाओँ किहाँजू ।
सीसा सार भरे जल अमृत,
सो अचवन करवाओँ किहाँजू ॥५॥

* क़ालीन या फ़र्श जो बड़े लोगोँ के चलने को बिछाया जाता है ।
† रोटी ।

पाँच पचीस पकरि नौ नारी,
सजन के गारी गवाओँ किहाँजू ।
तत्त तमोलिन सुघर सुमति ले,
सजन को बीरा खवाओँ किहाँजू ॥५॥
एकइस खंड महल के भीतर,
निर्भय पलँग विछाओँ किहाँजू ।
धर्मदास कहे साहिब मोरे,
मुक्ति मनोरथ पाओँ किहाँजू ॥७॥

॥ राग गारी २ ॥

सतगुरु आये द्वार, सुरति रस विंजना ।
काहे कै बैठक देउँ, सुरति रस विंजना ॥१॥
चंदन पीढ़ी बैठक, सुरति रस विंजना ।
नारी नर चरन पखारो, सुरति रस विंजना ॥२॥
भात रींधो रस दूध, सुरति रस विंजना ।
धोइ मूँग कै दाल, सुरति रस विंजना ॥३॥
काहे को थाल परोसोँ, सुरति रस विंजना ।
काहे कटोरी आन दूध, सुरति रस विंजना ॥४॥
सोने कै थार परोसो, सुरति रस विंजना ।
रूपे कटोरी आन दूध, सुरति रस विंजना ॥५॥
जेँइ लेहु सतगुर पाहुन, सुरति रस विंजना ।
मुख भर देहु असीस, सुरति रस विंजना ॥६॥
पाथर को का पूजै, सुरति रस विंजना ।
मुख बोलै ना खाय, सुरति रस विंजना ॥७॥
साँचे पूजहु साध, सुरति रस विंजना ।
मुख बोलै औ खाय, सुरति रस विंजना ॥८॥

आइ पिया सुख पाउ, सुरति रस बिंजना ।
करि लेहु सब्द सिँगार, सुरति रस बिंजना ॥९॥
बिँजना बिँजना* सब कहै, सुरति रस बिंजना।
बिंजन लखै न कोइ, सुरति रस बिंजना ॥१०॥
कहैँ कबीर धर्मदास, सुरति रस बिंजना ।
रहत अमर पुर छाय, सुरति रस बिंजना ॥११॥

मिश्रित का अंग

॥ शब्द १ ॥

गुरू बिन कौन हरै मोरी पीरा ॥ टेक ॥
रहत अलीन मलीन जुगन जुग, राई बिनत पाये एक हीरा १
पाये हीरा रहै नहिँ धीरा, लेइ के चले बोहि पारख तीरा २
सो हीरा साधू सब परखे, तब से भयो मन धीरा ३
धरमदास बिनवै कर जोरी, अजर अमर गुरु पाये कबीरा ४

॥ शब्द २ ॥

आये दीन-दयाल दया कीन्हा ॥ टेक ॥
दीन जानि गुरु समरथ आये, बिमल रूप दरसन दीन्हा १
चरन धोइ चरनामृत लीन्हा, सिंहासन बैठक दीन्हा २
करूँ आरती प्रेम निछावर, तन मन धन अरपन कीन्हा ३
धरमदास पर दाया कीन्हा, सार सब्द सुमिरन दीन्हा ४

॥ शब्द ३ ॥

बरनौँ मैँ साहेब तुम्हरे चरना ॥ टेक ॥
संतन सुख-दायक लायक प्रभु दुख हरना ॥१॥

---

* बिंजन बिंजन ।

सतजुग नाम अचिंत कहाये, खोड़स हंस को दई सरना ॥२॥
त्रेता नाम मुनेन्द्र कहाये, मधुकर विप्र को दई सरना ॥३॥
द्वापर करुनामय कहलाये, इंद्र मती के दुख हरना ॥४॥
कलजुग नाम कबीर कहाये, धर्मदास अस्तुति बरना ॥५॥

॥ शब्द ४ ॥

ज्ञान की चुनरी धुमल भइ सजनी, मन की न पुरइल आसा हो
बारहि बार जीव मोर लरजै, कैसे कटै दिन राता हो ॥१॥
सास दुख सहलैाँ ननद दुख सहलैाँ, पिय दुख सहल न जाई हो
जागो हो मोरि सासु गोसाँईं, पिय मोर चलल बिदेसवाँ हो २
पइयाँ परि परि ननदि जगावै, कहै न पावै सनेसवा हो।
मोर मुख ताको मत जा बिदेसवाँ, हैाँ मैं चेरि तुम्हार हो ॥३
बहियाँ पकरि स्वामी सेजिया बिठावै, जनि रोवो धनियाँ* हमार हो
कहैं कबीर सुनो धर्मदासा, जुगन जुगन अहिवात† हो ॥४॥

॥ शब्द ५ ॥

सत नामै जपु जग लड़ने दे ॥ टेक ॥
यह संसार काँट की बारी, अरुझि सरुझि के मरने दे ॥१॥
हाथी चाल चलै मोर साहेब, कुतिया भुँकै तो भुँकने दे ॥२॥
यह संसार भादैाँ की नदिया, डूबि मरै तेहि मरने दे ॥३॥
धरमदास के साहेब कबीरा, पथर पूजै तो पुजने दे ॥४॥

॥ शब्द ६ ॥

नैनन आगे ख्याल घनेरा ॥ टेक ॥
जेहि कारन जग डोलत भरमे,
सो साहेब घट लीन्ह बसेरा ॥१॥

---

* स्त्री। † सोहाग।

का संझा, का प्रात सवेरा,
जहँ देखूँ जहँ साहेब मेरा ॥२॥
अर्ध उर्ध विच लगन लगी है,
साहेब घट में कीन्हा डेरा ॥३॥
साहेब कबीर एक माला दीन्हा,
धरमदास घट ही विच फेरा ॥४॥

॥ शब्द ७ ॥

साहेब मोरे दीन्ही चोलिया नई ॥ टेक ॥
तीन पाँच मोरि चोलिया कै घुंडी,
लागी कुमति सुमतिया की पाती ॥१॥
यह चोलिया मोरे ससुरे से आई,
चोलिया पहिरि धनि भई अलमाती ॥२॥
सुनहु हो मोरी पार परोसिन,
यह चोलिया विरला जन जानी ॥३॥
पहिले वियाह मोर भयो सतगुरु से,
चोलिया के बँद मोरे सतगुरु खोली ॥४॥
धरमदास विनवै कर जोरी,
विसरि गई नइहरवा की बोली ॥५॥

॥ शब्द ८ ॥

साहेब मोरे पठई चोली अनमोल ॥ टेक ॥
यह चोलिया मोरे ससुरे से आई,
चोलिया पहिरि हम भईं अतोल ॥१॥
यह चोलिया में सहस बँद लागे,
चोलिया के बँद मोरे सतगुरु खोल ॥२॥

चोलिया पहिरि धनि चली है गवनवा,
सेत पितंबर लागे हिँडोल ॥३॥
धरमदास विनवै कर जोरी,
नैहर सुपना भयल अब मोर ॥४॥

॥ शब्द ९ ॥

जागु बहुरिया पहिरु रँग सारी ॥ टेक ॥
जागत भागीं पाँच कुँआरी,
जनम जनम के ताप निवारी ॥१॥
तजि कुल कानि से होइ रहु न्यारी,
अबके बिछुरे विपति अति भारी ॥२॥
जो खोलो पिय आय किवारी,
पहिरौं चीर अमर अति भारी ॥३॥
धरमदास बिनवै कर जोरी,
साहेब कबीर मोर गवन निवारी ॥४॥

॥ शब्द १० ॥

बरनौं संत समाज, जिनकी ज्ञान कचहरी ॥ टेक ॥
काया नगर में सुरति जँजीरा, सेत धजा फहराना ।
सहन* बिछौना सब्द सिपाही, सतगुरु नाम खजाना ॥१॥
संतोष तख्त पर ज्ञान है राजा, विवेक भया दीवानी ।
जगमग जोति छत्र सिर ऊपर, मुक्ति भरे जहँ पानी ॥२॥
काम क्रोध को सहज निकारो, माया कै मूँड़ मुँड़ावो ।
लोभ मोह सब दूरि बहावो, ऐसन अदल चलावो ॥३॥
सहज को दया वचन करु सीतल, सब को सब्द सुनावो ।
धरमदास विनवै कर जोरी, समरथ सरना आवो ॥४॥

---

* बर्दाश्त ।

॥ शब्द ११ ॥

हमरे का करे हाँसी लोग ॥ टेक ॥
मोरा मन लागा सतगुरु से, भला होय कै खोर* ।
जब से सतगुरु ज्ञान भयो है, चलै न केहु कै जोर ॥१॥
मात रिसाई पिता रिसाई, रिसाय बटोहिया लोग ।
ज्ञान खड़ग तिरगुन को मारूँ, पाँच पचीसो चोर ॥२॥
अब तो मोहिँ ऐसी बनि आवे, सतगुरु रचा सँजोग ।
आवत साध बहुत सुख लागै, जात बियापै रोग ॥३॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, सुनु हो बंदी-छोर ।
जा को पद त्रयलोक से न्यारा, सो साहेब कस होय ॥४॥

॥ शब्द १२ ॥

जेहि सुमिरे गुन का भये, जा से कर्म न नासा ॥ टेक ॥
पौंड़त पौंड़त भवजले, काहू पार न पावा ।
बूड़ि गये नइया मिलै, कहो केहिक चढ़ावा ॥१॥
स्वाँति बुंद के कारने, चात्रिक चित लावै ।
प्यास गये सलिता मिलै, कहो केहिक पियावै ॥२॥
नौ कन्या के कारने, धरो बंक कराला ।
कपट रूप पाखँड रचयो, वोहि पैज सँवारा ॥३॥
औगुन है सब दास को, गुन साहेब तुम्हारा ।
धरमदास बिनती करै, स्वाँसा धन धारा ॥४॥

॥ शब्द १३ ॥

सतगुरु कहत नाम गुन न्यारा ॥ टेक ॥
कोइ निर्गुन कोइ सर्गुन गावै, कोइ किरतिम कोइ करता ।
लख चौरासी जीव जंतु मेँ, सब घट एकै रमिता ॥१॥

---

* बुरा ।

सुनो साध निरगुन की महिमा, बूझै बिरला कोई।
सरगुन फंदे सबै चलत है, सुर नर मुनि सब लोई ॥२॥
निर्गुन नाम निअच्छर कहिये, रहे सबन से न्यारा।
निर्गुन सर्गुन जम कै फंदा, वोहि कै सकल पसारा ॥३॥
साहेब कबीर के चरन मनावो, साधुन के सिर-ताजा।
धरमदास पर दाया कीन्हा, बाँह गहे की लाजा ॥४॥

॥ शब्द १४ ॥

साहेब हमरे सहज लगी डोरी ॥ टेक ॥
यह डोरी मोहिं सतगुरु दीन्हा,
हमहिं अधीन अपन करि लीन्हा ॥१॥
यह डोरी मोरे प्रान उबारे,
लै भवसागर पार उतारे ॥२॥
यह डोरी चढ़ि जात गगन मैं,
निसु दिन साहेब सँग रहत मगन मैं ॥३॥
धर्मदास बिनवै कर जोरी,
काल कष्ट से तिनुका तोरी ॥४॥

॥ शब्द १५ ॥

साहेब येहि बिधि ना मिलै, चित चंचल भाई ॥ टेक ॥
माला तिलक उरमाइ के, नाचै अरु गावै।
अपना मरम जानै नहीं, औरन समुझावै ॥१॥
देखे को बक ऊजला, मन मैला भाई।
आँखि मूंदि मौनी भया, मछरी धरि खाई ॥२॥
कपट कतरनी पेट मैं, मुख बचन उचारी।
अंतर गति साहेब लखै, उन कहा छिपाई ॥३॥
आदि अंत की बार्ता, सतगुरु से पावो।
कहै कबीर धर्मदास से, मूरख समझावो ॥४॥

॥ शब्द १६ ॥

भव सागर नदिया बहुत अगम है,
केहि बिधि उतरौं पारा हो ॥ टेक ॥
यह भव देख जिया मोर काँपै,
नैन बहै जल धारा हो।
वार पार कछु सूझत नाहीं,
मोह लहर झकझोरा हो ॥१॥
नहिं देखौं नाव न देखौं बेरा,
नहिं देखौं खेवनहारा हो।
येहि औसर प्रभु केकाँ* गोहराऔं,
बूड़त हौं मँझ धारा हो ॥२॥
असी कोस बालू कै रेतिया,
असी कोस अँधियारा हो।
असी चार चौरासी जोजन,
जहँवाँ जम रखवारा हो ॥३॥
जोग जाप एको नहिं कीन्हा,
ना गुरु से ब्योहारा हो।
खाल खैंचि जम भूसा भरिहै,
बढ़ई चलावै जस आरा हो ॥४॥
अगम भूमि से गुरु चलि आये,
सुनि के सब्द हमारा हो।
कहैं कबीर सुनो धर्मदासा,
अपने जनहिं उबारा हो ॥५॥

* किस को।

सुनो साध निरगुन की महिमा, बूझै बिरला कोई ।
सरगुन फंदे सबै चलत है, सुर नर मुनि सब लोई ॥२॥
निर्गुन नाम निअच्छर कहिये, रहे सबन से न्यारा ।
निर्गुन सर्गुन जम के फंदा, वोहि कै सकल पसारा ॥३॥
साहेब कबीर के चरन मनावो, साधुन के सिर-ताजा ।
धरमदास पर दाया कीन्हा, बाँह गहे की लाजा ॥४॥

॥ शब्द १४ ॥

साहेब हमरे सहज लगी डोरी ॥ टेक ॥
यह डोरी मोहिँ सतगुरु दीन्हा,
हमहिँ अधीन अपन करि लीन्हा ॥१॥
यह डोरी मोरे प्रान उबारे,
लै भवसागर पार उतारे ॥२॥
यह डोरी चढ़ि जात गगन मेँ,
निसु दिन साहेब सँग रहत मगन मँ ॥३॥
धर्मदास बिनवै कर जोरी,
काल कष्ट से तिनुका तोरी ॥४॥

॥ शब्द १५ ॥

साहेब येहि बिधि ना मिलै, चित चंचल भाई ॥ टेक ॥
माला तिलक उरमाइ के, नाचै अरु गावै ।
अपना मरम जानै नहीं, औरन समुझावै ॥१॥
देखे को बक ऊजला, मन मैला भाई ।
आँखि मूंदि मौनी भया, मछरी धरि खाई ॥२॥
कपट कतरनी पेट मेँ, मुख बचन उचारी ।
अंतर गति साहेब लखै, उन कहा छिपाई ॥३॥
आदि अंत की वार्ता, सतगुरु से पावो ।
कहै कबीर धर्मदास से, मूरख समझावो ॥४॥

॥ शब्द १६ ॥

भव सागर नदिया बहुत अगम है,
केहि विधि उतरौं पारा हो ॥ टेक ॥
यह भव देख जिया मोर काँपै,
नैन बहै जल धारा हो ।
वार पार कछु सूझत नाहीं,
मोह लहर झकझोरा हो ॥१॥
नहिं देखौं नाव न देखौं बेरा,
नहिं देखौं खेवनहारा हो ।
येहि औसर प्रभु केकाँ* गोहराऔं,
बूड़त हौं मँझ धारा हो ॥२॥
असी कोस बालू के रेतिया,
असी कोस अँधियारा हो ।
असी चार चौरासी जोजन,
जहँवाँ जम रखवारा हो ॥३॥
जोग जाप एको नहिं कीन्हा,
ना गुरु से व्योहारा हो ।
खाल खैंचि जम भूसा भरिहै,
बढ़ई चलावै जस आरा हो ॥४॥
अगम भूमि से गुरु चलि आये,
सुनि के सब्द हमारा हो ।
कहैं कबीर सुनो धर्मदासा,
अपने जनहिं उबारा हो ॥५॥

* किस को ।

॥ शब्द १९ ॥

गाँठ परी पिया बोले न हम से ॥१॥
माल मुलुक कछु संग न जैहै,
नाहक बैर कियो है जग से ॥२॥
जो मैं जनितिउँ पिया रिसियै है,
नाहक प्रीति लगाती न जग से ॥३॥
निसु बासर पिय सँग मैं सूतिउँ,
नैन अलसानी निकरि गये घर से ॥४॥
जस पनिहारि धरे सिर गागर,
सुरति न टरै बतरावत* सब से ॥५॥
धरमदास बिनवै कर जोरी,
साहेब कबीर को पावै भाग से ॥६॥

॥ शब्द २० ॥

मेरे मन बसि गये साहेब कबीर ॥ टेक ॥
हिन्दू के तुम गुरू कहाओ, मुसलमान के पीर ।
दोउ दीन ने झगड़ा माड़ेव, पायौ नहीं सरीर ॥१॥
सील सँतोष दया के सागर, प्रेम प्रतीत मति-धीर ।
वेद किताब मते के आगर, दोउ दीनन के पीर ॥२॥
बड़े बड़े संतन हितकारी, अजरा अमर सरीर ।
धरमदास की बिनय गुसाँई, नाव लगावो तीर ॥३॥

॥ शब्द २१ ॥

अमर लोक से हम चलि आये, आये जगत मँझारा हो ।
स्याही छाप पर्वाना लाये, समरथ के कड़िहारा हो ॥१॥
जीवन दुखित देखि संसारा, तेहि कारन पग धारा हो ।
बंस बयालिस थाना रोपूँ, जंबू दीप मँझारा हो ॥२॥

---

* बात चीत करती है ।

॥ शब्द १७ ॥

सइयाँ महरा*, मोर डोलिया फँदावो ॥ टेक ॥
काहे कै तोर डोलिया पालकी,
काहे कै ओहि मेँ बाँस लगावो ॥१॥
आव भाव कै डोलिया पालकी,
सत्त नाम कै बाँस लगावो ॥२॥
प्रेम कै डोर जतन से बाँधो,
ऊपर खलीता† लाल ओढ़ावो ॥३॥
ज्ञान दुलीचा झारि बिछावो,
नाम कै तकिया अंरध लगावो ॥४॥
धरमदास बिनवै कर जोरी,
गगन मँदिल मेँ पिया दुलरावो ॥६॥

॥ शब्द १८ ॥

पिया परदेसिया, गवन लैजा मोर ॥ टेक ॥
आव भाव का अनवट बिछुआ,
सब्द के घुँघुरू उठे घनघोर ॥१॥
तन सारी मन रतन लहँगवा,
ज्ञान की अँगिया भई सरबोर ॥२॥
चारि जना मिलि लेइ चले हैँ,
जाइ उतारे जमुनवा के कोर ॥३॥
धरमदास बिनवै कर जोरी,
नगरी के लोग कहैँ कुल-बोर ॥४॥

* कहार। † ओहार।

॥ शब्द १९ ॥

गाँठ परी पिया बोले न हम से ॥१॥
माल मुलुक कछु संग न जैहै,
नाहक बैर किये है जग से ॥२॥
जो मैं जनितिउँ पिया रिसियै है,
नाहक प्रीति लगाती न जग से ॥३॥
निसु बासर पिय सँग मैं सूतिउँ,
नैन अलसानी निकरि गये घर से ॥४॥
जस पनिहारि धरे सिर गागर,
सुरति न टरै बतरावत* सब से ॥५॥
धरमदास बिनवै कर जोरी,
साहेब कबीर को पावै भाग से ॥६॥

॥ शब्द २० ॥

मेरे मन बसि गये साहेब कबीर ॥ टेक ॥
हिन्दू के तुम गुरू कहाओ, मुसलमान के पीर।
दोउ दीन ने झगड़ा माड़ेव, पायौ नहीं सरीर ॥१॥
सील सँतोष दया के सागर, प्रेम प्रतीत मति-धीर।
वेद कितेब मते के आगर, दोउ दीनन के पीर ॥२॥
बड़े बड़े संतन हितकारी, अजरा अमर सरीर।
धरमदास की विनय गुसाँईं, नाव लगावो तीर ॥३॥

॥ शब्द २१ ॥

अमर लोक से हम चलि आये, आये जगत मँझारा हो।
स्याही छाप पर्वाना लाये, समरथ के कढ़िहारा हो ॥१॥
जीवन दुखित देखि संसारा, तेहि कारन पग धारा हो।
वंस बयालिस थाना रोपूँ, जंबू दीप मँझारा हो ॥२॥

* बात चीत करती है।

दसो मोकाम की भक्ति दृढ़ाऊँ, चौका पान पर्वाना हो।
बारह पंथ चलैंगे आगे, घर घर बोध पसारा हो ॥३॥
गुरू सहित सब चेला डूबे, फिर फिर गर्भ मँझारा हो।
बचन बंस को बीरा पावै, तब होइहै निरवारा हो ॥४॥
तेरह पीढ़ी ज्ञान रजधानी, चूरामनि औतारा हो।
उनके अंग छाँह नहिँ होइहै, देह विदेह अपारा हो ॥५॥
उनके आगे जुग मति चलिहै, राज नीति उठि जाई हो।
पाँच सब्द की इच्छा नाहीं, यह गति सब मैं आई हो ॥६॥
जब लौं कौल पूर नहिँ आवै, तब लग भेद छिपावो हो।
कोटिन करै बहुत को थापै, फेरि काल घर आवै हो ॥७॥
पाँच हजार पचीस के बीते, सत्त चाल ठहराई हो।
पारस पान जबै पुनि उगिहै, जग निद्रा मिटि जाई हो ॥८॥
जो कोइ होय सत्त कै तिनुका, सोई मोहिँ पतियाई हो।
की तो अमी अंकुरै वा मैं, की गुरु चरन सिधाई हो ॥९॥
ना गुरु सरन न नाम की करनी, कैसे हंस कहावै हो।
बारह पंथ मिलैंगे आगे, छाँड़ कपट चतुराई हो ॥१०॥
कहै कबीर सुनो धर्मदासा, आगम तोहि लखाऊँ हो।
जो कोइ हंसा होइ हमारा, तिन का देहु लखाई हो ॥११॥

॥ पहाड़ा ॥

कोई लोढ़त संत सुजान, काया बन फूलि रहा ॥ टेक ॥
एका एक मिलै गुरु पूरा, मूल मंत्र तब पावै।
सब साधन की बानी बूझै, मन परतीत बढ़ावै ॥१॥
दूआ दुई तजै मन दुबिधा, रज गुन मन से त्यागै।
सतगुरु ऊरध* माहीं निरखै, सोवत से उठि जागै ॥२॥

* ऊँचे।

तीआ तीन त्रिवेनी संगम, जहाँ अगम अस्थाना।
तन मन की सब त्रिस्ना त्यागै, कोइ हरिजन करै अस्नाना ३
चौआ चार चतुर्भुज सोहै, पँचवँ पद को धावै।
प्रेम हिँडोला झूला झूलै, उपजै चित अनुरागै ॥४॥
पाँचे पाँच पचीसो बस करि, साँचे होइ ठहरावै।
इँगला पिँगला सुखमनि सोधै, तब चरनोदक पावै ॥५॥
छठएँ छैयो चक्रै बेधै, सुन्न भवन मन लावै।
बिगसै कँवल काया के भीतर, तब चंदा दरसावै ॥६॥
सतएँ सात सत्त धुनि उपजै, धुनि सुनि आनँद बाढ़ी।
सहजै दीनदयाल कृपा-निधि, बूड़त भौजल काढ़ी ॥७॥
अठएँ आठै अष्ट कँवल मेँ, ऊरध निरखै सोई।
आतम चीन्हि परमातम चीन्है, ताहि तुलै नहिँ कोई ॥८॥
नवएँ नवो द्वार होइ निरखै, जहँ बरै जगमग जोती।
दामिनि दमकै अमृत बरसै, अजर झरै जहँ मोती ॥९॥
दसएँ दसम द्वार चढ़ि बैठे, पढ़ि लै एक पहाड़ा।
धरमदास चरनन पड़ि बिनवै, निसु दिन बारम्बारा ॥१०॥

॥ नाम लीला ॥

साहेब अविचल नाम, दया करि पाइये ॥ टेक ॥
प्रथम बन्दौं गुरु चरन, सीस संतन को नाऊँ।
सतगुरु होयँ दयाल, तो नाम चरित्र सुनाऊँ ॥
सत्त सुकृत हिरदे बसै, कबहुँ न आवै हारि।
अविगति से परिचै भई, तो आवागवन निवारि ॥ १ ॥
कहा आन की सेव, जीव को भर्म न भाजै।
अलख सरूपी आप, तहाँ अनहद धुनि गाजै ॥

यह धुनि सुनि अविचल रहो, इत उत मन नहिँ जाय।
अमृत केरी वुन्द है, सो अमृत माहिँ समाय ॥२॥
प्रथम पुरुष पग धरयो सत्त, सतजुग मँ आये।
परमारथ के काज, जीव की वन्दि छोड़ाये ॥
कागा तेँ हंसा किया, जाति बरन कुल खोय।
जम से तिनुका तोरि के, गंज न सक्कै कोय ॥३॥
सतजुग गयो व्यतीत, सुनो त्रेता की बानी।
धरयो मुनिन्द्र को रूप, आप सत सुकृत ज्ञानी ॥
हंसन को परमोधि के, आप रह्यो नीनार।
नाम प्रतीत वसे जो जिव को, सो जन उतरे पार ॥४॥
त्रेता गयो व्यतीत, सुनो द्वापर की बानी।
करुनामय को रूप धरयो, सत सुकृत ज्ञानी ॥
चेतनहारा चेतियो, वहुरि न चेता जाय।
सत्त सुकृत चीन्हे विना, काल सभन को खाय ॥५॥
कलिजुग प्रगट कबीर, काल को देखा जोरा।
किये कासी अस्थान, आप भै वन्दीछोरा ॥
मुनि पंडित सब वादहीं, कोई न पहुंचे ज्ञान।
निर्गुन लीला धारि के, आप पुरुष निर्वान ॥६॥
कलिजुग कर्म अपार, जीव कोइ कहा न मानै।
सीखे साखी सब्द, उलटि के वाद बखानै ॥
वाद किये पहुँचै नहीं, मन ममता के जोर।
लख चौरासी जिया जोनि मँ, भर्मे नरक अघोर ॥७॥
कठिन काल को रूप, अंत कोइ जानि न भाई।
जब आवै मृतु अंध, जीव कहँ जाय पराई ॥

नाम बिना बाचै नहीं, केतो करै उपाय।
तीरथ जाय सकल भ्रमि आवै, जम को त्रास न जाय॥८॥

बहुत ज्ञान बहु गम्य, बहुत मूरत को पूजै।
दीपक धरै अनेक, अंध को आँखि न सूझै॥
बहुतक जुग भरमत फिरै, कितहुँ न पावै दाद।
सात द्वीप नौ खंड में, सत्य नाम बिनु बाद॥९॥
सतगुरु का उपदेस, संत कोउ बिरला जानै।
करै तत्त्व का खोज, बहुरि संकट नहिँ आनै॥
ऐसे सुरति लगाइये, जैसे चन्द चकोर।
कठिन पड़े सुख दुख सहै, प्रीत निभावै ओर॥१०॥
अबिगति अगम अपार, और सब दीसै बाजी।
पढ़ि पढ़ि बेद किते़ब, भुले पंडित औ काजी॥
अगम गम्य जाने नहीं, बीचहिँ परे भुलाय।
जैसे ज्वारी जुवा खेलि के, सरबस चले गँवाय॥११॥
नहिँ सागर नहिँ सिखर, नहीं तहँ पवन न पानी।
नहिँ धरती आकास, नहीं कछु और निसानी॥
चन्द सूर वा घर नहीं, नहीं दिवस नहिँ राति।
जहाँ पुरुष आपै बसै, तहँ कुल कर्म न पाँति॥१२॥
वहाँ नहीं तीरथ ब्रत, नहिँ तहँ बेद बिचारा।
नहिँ देवी नहिँ देव, नहीं कछु नेम अचारा॥
जरा मरन वा घर नहीं, नहीं लाभ नहिँ हान।
प्रेम मगन हंसा रहै, सो धरै पुरुष को ध्यान॥१३॥
जहाँ पुरुष रहै आप, तहाँ हंसन को बासा।
तहँ नहिँ माया मोह, नहीं तहँ तृष्ना आसा॥

हर्ष सोक वा घर नहीँ, नहीँ कर्म व्यवहार।
हंसा परम अनंद मेँ, (सो) छूटे भ्रम जंजार ॥१४॥
चारो जुग के हंस, सत्य सतलोक सिधाये।
भ्रमत फिरे सब काग, दूत वैठे रखवाये॥
मुनि पंडित जोगी जती, धरे काल को ध्यान।
तीन लोक के बाहरे, कोइ न पाये जान ॥१५॥
भ्रमत फिरे जुग चारि, रूप कीन्हा विस्तारा।
अजहुँ न समुझै अंध, परे जम काल की धारा॥
वहुत भाँति परमोधिया, कोइ कोइ लीन्हा मान।
आदि अंत के हंस हैँ, सो प्रगट भये हैँ आन ॥१६॥
अनजाने को दूरि, जाने को निकट विराजै।
सब्द सँनेही संत, सोई सब ऊपर छाजै॥
मगन होय मन को गहै, हंस रूप आनन्द।
सुमिरन दीनदयाल को, ज्योँ उडगन* मेँ चन्द ॥१७॥
बहुत गुरू संसार रहत, घर कोइ न बतावै।
आपन स्वारथ लागि, सीस पर भार चढ़ावै॥
सार सब्द चीन्हे नहीँ, बीचहिँ परे भुलाय।
सत्त सुकृत चीन्हे विना, सब जुग काल चबाय ॥१८॥
यह लीला निर्वान, भेद कोइ बिरला जाने।
सब जग भरमे डार, मूल कोइ बिरला माने॥
मूल नाम एक पुरुष है, पुष्पद्वीप मेँ बास।
सतगुरु मिलैँ तो पाइये, पूरन प्रेम बिलास ॥१९॥
नाम सनेही होय, दूत जम निकट न आवै।
परमतत्त्व पहिचानि, सत्त साहेब गुन गावै॥

*तारा।

अजर अमर विनसै नहीं, सुख सागर में बास।
केवल नाम कबीर है, गावै धनि धर्मदास ॥२०॥

॥ मुक्ति लीला ॥

हीरा जन्म न बारम्बार, समुझि मन चेत हो ॥ टेक ॥
जैसे कीट पतंग पपान, भये पसु पच्छी।
जल तरंग जल माहिँ, रहे कच्छा औ मच्छी ॥
अंग उघारे रहे सदा, कबहुं न पावै सुक्ख।
सत्य नाम जाने विना, जन्म जन्म बड़ दुक्ख ॥१॥
सीतल पासा ढारि, दाव खेलो सँग्हारी।
जीतो पक्की ओर, आव जनि जैहा हारी॥
रामै राम पुकारि के, लीन्हो नरक निवास।
मूड़ गड़ाय रहे जिव, गर्भ माहिँ दस मास ॥२॥
गर्भ दुक्ख तेँ काढ़ि, प्रगट प्रभु बाहर कीन्हो।
भक्ति अंग को छापि, अंक दस्तक लिखि दीन्हो ॥
वा को नाम बिसरि गयो, जिन पठयो संसार।
रंचक सुख के कारने, बिसरि गयो निज सार ॥३॥
नहिँ जाने केहि पुन्य, प्रगट भे मानुप देही।
मन बच कर्म सुभाव, नाम से कर ले नेही ॥
लख चौरासी भर्मि के, पायो मानुप देह।
सो मिथ्या कस खोवते, झूठी प्रीति सनेह ॥४॥
बालक बुद्धि अजान, कछू मन में नहिँ आने।
खेले सहज सुभाव, जहाँ आपन मन माने ॥
अधर कलोले होइ रह्यो, ना काहू को मान।
भली बुरी ना चित धरै, बारह बरस समान ॥५॥

जोबन रूप अनूप, मसी, मुख ऊपर छाई।
अंग सुगंध लगाय, सीस, पगिया लटकाई॥
अंध भये सूझै नहीं, फूटि गई है चार*।
झटके पड़े पतंग ज्यौं, देखि विरानी नार ॥६॥
जोबन जोर झकोर, नदी उर अंतर बाढ़ी।
संतो हो हुसियार, कियो ना बाँहू गाढ़ी॥
दे गंजगीरी प्रेम की, मूँदो दसो दुवार।
वो साँई के मिलन में, तुम जनि लावो वार॥७॥
वृद्ध भये पछिताय, जवै तीनों पन हारे।
भई पुरानी प्रीति, बोल अब लागत प्यारे॥
लख कत्र दुनियाँ ह्वै रही, केस भये सब सेत।
बोलत बोल न आवई, लूटि लिये जम खेत॥८॥
माया रंग कुसुम्म, महा देखन को नीको।
मीठो दिन दुइ चार, अंत लागत है फीको॥
कोटिन जतन रह्यो नहीं, एक अंग निज मूल।
ज्यौं पतंग उड़ि जायगो, ज्यौं माया कापूर॥९॥
नाम रंग मंजीठ, लगे छूटे नहिं भाई।
लख पख रहो समाय, सार तामें अधिकाई॥
केती बार धुलाइये, दे दे करड़ा धोय।
ज्यौं ज्यौं भट्ठी पर दिये, त्यौं त्यौं उज्जल होय॥१०॥
निकट जमन के जात, तबै ह्वैगो मुख कारो।
बोले बोल न आय, तबै तोहि करिहैं गारो†॥
काल छली तिहुँ लोक में, नहिं काहू की मान।
राजा राना मारिया, सबहीं कीन्ह दिवान‡॥११॥

*हो अन्तर की दो भीतर की आँखें। †कारागार या जेलखाना ‡दिवाना।

देऊँ सुमति बिचार, सीख जो मेरी माने।
चलो सुमारग चाल, भलो जो अपने जाने॥
तिरिया निकट बुलाइ के, दे गइ माथे हाथ।
लेगइ रंग निचोइ के, ज्यौं तेली के काथ*॥१२॥
जो मरि भाखा बोल, बोलि कामिन चित चोर्यो।
छिनहीं प्रीति बढ़ाय, नाम से नाता तोर्यो॥
रस बस कीन्हो आइ के, गयो ठगैारी मेल।
जीव लोभ बस भ्रमि रहे, करि केवल सुख केल॥१३॥
सोवत हो केहि नींद, मूढ़ मूरख अज्ञानी।
भोर भये परभात, अबहिँ तुम करो पयानी॥
अब हम साँची कहत हैं, उड़िये पंख पसार।
छुटि जैहो या दुक्ख तैं, तन सरवर के पार॥१४॥
नांव झाँझरी साजि, बाँधि बैठो बैपारी।
बोझ लद्यो पाषान, माहिँ डर लागै भारी॥
माँझ धार भव तखत मैं, आइ परैगी भीर।
एक नाम केवटिया करि ले, सोई लगावै तीर॥१५॥
सै भइया की बाँह, तपे दुर्जोधन† राना।
परे नरायन बीच, भूमि देते गरवाना‡॥
जुद्ध रच्यो कुरुछेत्र मैं, बानन बरसे मेंह।
तिनहीं के अभिमान तैं, गिधहु न खायो देह॥१६॥
छत्रपती भूपाल रहत, देखा नाहिँ कोई।
दिन दस गये बजाइ, गर्द माँ मिलि गे सोई॥

* तरछट। † दुर्योधन कौरवों के राजा के सौ भाई थे, जो सब महाभारत में मारे गये। ‡ राजा युधिष्ठिर को थोड़ी ज़मीन श्रीकृष्ण ने दिलाना चाहा था पर दुर्योधन ने छोटी से इनकार किया।

परिहौ नरक अघोर में, अब किन चेतो अंध ।
सत्त नाम जाने बिना, परो काल के फंद ॥१७॥
हुई सलीता संग, बहुत हाथी औ घोरा ।
मरन की बेरिया संग, चले नहिँ एको होरा ॥
कंचन महल धरे रहे, और सुंदरी नारि ।
ज्योँ करि आये त्योँ गये, चले दोऊ कर झारि ॥१८॥
जोधा आगे उलट पुलट, यह पुहमी* करते ।
बस नहिँ रहते सोय, छिने इक में बल होते ॥
सौ जोजन मरजाद सिंध कै, करते एकै फाल† ।
हाथन पर्बत तौलते, तिन धरि खायो काल ॥१९॥
ऐसा यह संसार, जैसी रहटे की घरिया ।
इक रीते फिरि जाय, एक आवै फिरि भरिया ॥
उपजि उपजि बिनसन करै, फिरि फिरि जमे गिरास ।
यही तमासा देखि के, मनुवा भयो उदास ॥२०॥
जैसे कलपि कलपि के, भये हैँ गुड़ की माखी ।
चाखन लागी बैठि, लपट गइ दोनोँ पाँखी ॥
पंख लपेटे सिर धुनै, मनहीँ मन पछिताय ।
वह मलयागिरि छाँड़ि के, इहाँ कौन बिधि आय ॥२१॥
खेत बिरानो देखि, मृगा एक बन को रीझेव ।
नित प्रति चुनि चुनि खाय, बान मेँ इक दिन बीधेव ॥
उचकन चाहै बल करै, मनहीँ मन पछिताय ।
अब सो उचकि न पाइ हो, धनी‡ पहूँचो आय ॥२२॥
रहे दूध के दूध, जाय पानी के पानी ।
सुनो स्रवन चित लाय, कहौँ कछु अकथ कहानी ॥
अकह कमल तेँ सुति उठी, अनुभव सब्द प्रकास ।
केवल नाम कबीर है, गावै धनि धर्मदास ॥२३॥

*पृथ्वी । †फलाँग । ‡खेतिहर ।

यद्यपि ऊपर लिखे हुए कारनों से इन पुस्तकों के छापने में बहुत ख़र्च होता है तौ भी सर्व साधारन के उपकार हेतु दाम आध आना फ़ी आठ पृष्ठ से अधिक किसी का नहीं रक्खा गया है । जो लोग सब्सक्रैबर अर्थात पक्के गाहक होकर कुछ पेशगी जमा कर देंगे जिन की तादाद दो रुपये से कम न हो उन्हें एक चौथाई कम दाम पर जो पुस्तकें आगे छपैंगी बिना माँगे भेज दी जायँगी यानी रुपये में चार आना छोड़ दिया जायगा परंतु डाक महसूल उन के ज़िम्मे होगा और पेशगी दाम न देने की हालत में वी० पी० कमिशन भी उन्हें देना पड़ेगा । जो पुस्तकें अब तक छप गई हैं (जिन के नाम आगे लिखे हैं) सब एक साथ लेने से भी पक्के गाहकों के लिये दाम में एक चौथाई की कमी कर दी जायगी पर डाक महसूल और वी० पी० कमिशन लिया जायगा ।

अब प्राण-संगली गुरु नानक का अनमोल और दुर्लभ ग्रंथ जिसे उन के उपदेश और गुप्त भेद का कोष कहना चाहिये, सबिस्तार टीका के साथ छप रहा है ।

मलूकदास जी व बिहारवाले दरिया साहेब की शब्दावलियों का छपना लिपियों के बहुत अशुद्ध होने के कारण अभी मुलतवी रक्खा गया है ।

प्रोप्राइटर, बेलवेडियर छापाख़ाना,

मार्च, १९१२ ई० इलाहाबाद ।

फ़िहरिस्त छपी हुई पुस्तकों की

तुलसी साहेब (हाथरस वाले) की शब्दावली और जीवन-चरित्र	...	२)
,, ,, रत्न सागर मय जीवन-चरित्र	..	।।।=)
,, ,, घट रामायन दो भागों में, मय जीवन-चरित्र के,		
पहिला भाग ...	...	१)
,, ,, दूसरा भाग ...	...	१)
ग़रीबदास जी की बानी और जीवन-चरित्र	...	।।।=)
कबीर साहेब का साखी-संग्रह (२१५२ साखियाँ) ...	...	।।।)।।।

कबीर साहेब की शब्दावली और जीवन-चरित्र, भाग १ दूसरा एडिशन ॥)
,, ,, शब्दावली भाग २ ... ... ॥=)
,, ,, ज्ञान-गुदड़ी व रेख़ते ... ... ≡)
,, ,, अखरावती ... ... -)
धनी धरमदास जी की शब्दावली और जीवन-चरित्र ... ।=)
पलटू साहेब की शब्दावली (कुंडलिया इत्यादि) और जीवन-चरित्र, भाग १ ... ... ॥)
पलटू साहेब की शब्दावली, भाग २ ... ... ।-)॥
चरनदासजी की बानी और जीवन-चरित्र, भाग १ ... ... ॥)॥
,, ,, भाग २ ... ... ।≡)॥
रैदासजी की बानी और जीवन-चरित्र ... ... ।-)॥
जगजीवन साहेब की शब्दावली और जीवन-चरित्र, भाग १ ... ॥-)
,, ,, शब्दावली भाग २ ... . ॥-)
दरिया साहेब (बिहार वाले) का दरियासागर और जीवन-चरित्र ।-)
दरिया साहेब (मारवाड़ वाले) की बानी और जीवन-चरित्र ... ।)॥
भीखा साहेब की शब्दावली और जीवन-चरित्र ... ... ।≡)
गुलाल साहेब (भीखा साहब के गुरू) की बानी और जीवन-चरित्र ॥-)॥
मीरा बाई की शब्दावली और जीवन-चरित्र ... ... ।-)
सहजो बाई की बानी और जीवन-चरित्र ... ... ।)
दया बाई की बानी और जीवन-चरित्र ... ... =)॥
गुसाँई तुलसीदासजी की बारहमासी ... ...)॥
यारी साहेब की रत्नावली और जीवन-चरित्र ... ... -)॥
बुल्ला साहेब का शब्दसार और जीवन-चरित्र ... ... =)॥
केशवदासजी की अमींघूंट और जीवन-चरित्र ... ... -)
धरनीदासजी की बानी और जीवन-चरित्र ... ... ।)
अहिल्याबाई का जीवन-चरित्र अँग्रेज़ी पद्य में ... ... =)

मूल्य में डाक महसूल व वाल्यू पेएबल कमिशन शामिल नहीं है ।

मनेजर, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद ।

Printed at The Belvedere Steam Printing Works, Allahabad, by E. Hall.

धरनीदासजी की बानी

[जीवन-चरित्र सहित]

जिस मैं

उन महात्मा के चुने हुए शब्द और राग,
गर्भ-लीला, कवित्त, ककहरा, अलिफ़-नामा,
पहाड़ा, बारहमासा, बोध-लीला,
और साखियाँ छपी हैं

और गूढ़ शब्दों के अर्थ भी नोट मैं लिखे हैं।

इलाहाबाद
बेलवेडियर स्टीम प्रिंटिंग वर्क्स मैं प्रकाशित हुई।
सन् १९११

६४ सफ़हा] [दाम ।=)

Printed at the Belvedere Steam Printing Works, Allahabad, by E. Hall.

निवेदन

संतबानी पुस्तक-माला के छापने का अभिप्राय जक्त-प्रसिद्ध महात्माओं की बानी व उपदेश को जिन का लोप होता जाता है बचा लेने का है। अब तक जितनी बानियाँ हम ने छापी हैं उन में से विशेष तो पहिले छपी ही नहीं थीं और कोई २ जो छपी थीं तो ऐसे छिन्न भिन्न, बेजोड़ या अशुद्ध रूप में कि उन से पूरा लाभ नहीं उठ सकता था।

हम ने देश देशान्तर से बड़े परिश्रम और व्यय के साथ ऐसे हस्त-लिखित दुर्लभ ग्रंथ या फुटकर शब्द जहाँ तक मिल सके असल या नक़ल कराके मँगवाये हैं और यह कारंवाई बराबर जारी है। भर सक तो पूरे ग्रंथ मँगा कर छापे जाते हैं और फुटकर शब्दों की हालत में सर्व साधारन के उपकारक पद चुन लिये जाते हैं। कोई पुस्तक बिना कई लिपियों का मुक़ाबला किये और ठीक रीति से शोधे नहीं छापी जाती, ऐसा नहीं होता कि औरों के छापे हुए ग्रंथों की भाँति बेसमझे और बेजाँचे छाप दी जाय। लिपि के शोधने में प्रायः उन्हीं ग्रंथकार महात्मा के पंथ के जानकार अनुयायी से सहायता ली जाती है और शब्दों के चुनने में यह भी ध्यान रक्खा जाता है कि वह सर्व साधारन की रुचि के अनुसार और ऐसे मनोहर और हृदय-बेधक हों जिन से आँख हटाने का जी न चाहे और अंतःकरन शुद्ध हो।

कई बरस से यह पुस्तक-माला छप रही है और जो जो कसरें जान पड़ती हैं वह आगे के लिये दूर की जाती हैं। कठिन और अनूठे शब्दों के अर्थ और संकेत नोट में दे दिये जाते हैं। जिन महात्मा की बानी है उन का जीवन-चरित्र भी साथ ही छापा जाता है और जिन भक्तों और महापुरुषों के नाम किसी बानी में आये हैं उन के संक्षेप वृत्तांत और कौतुक फुट-नोट में लिख दिये जाते हैं।

☞—THIS LIST CANCELS ALL PREVIOUS LISTS.

सूचना—कागज़ का दाम इधर और भी बढ़ जाने और छपाई तथा सिलाई बहुत बढ़ जाने से किताबों का दाम अब नीचे लिखे मुताबिक रखना ही पड़ा—

फ़िहरिस्त छपी हुई पुस्तकों की

जीवन-चरित्र हर महात्मा के उन की बानी के आदि में दिया है

कबीर साहिब का साखी संग्रह	१=)
कबीर साहिब की शब्दावली, भाग पहला ॥), भाग दूसरा ...	॥)
,, ,, ,, भाग तीसरा।≈), भाग चौथा ...	≡)
,, ,, ज्ञान-गुदड़ी, रेख़्ते और झूलने	।=)
,, ,, अखरावती	=)
धनी धरमदास जी की शब्दावली और जीवन-चरित्र	॥-)
तुलसी साहिब (हाथरस वाले) की शब्दावली और जीवन-चरित्र भाग प०	१=)
,, ,, भाग २, पद्मसागर ग्रंथ सहित	१=)
,, ,, रत्न सागर मय जीवन-चरित्र ...	१।-)
,, ,, घट रामायन मय जीवन चरित्र, भाग १ ...	१॥)
,, ,, ,, ,, भाग २ ...	१॥)
गुरु नानक की प्राण-संगली सटिप्पण, और जीवन-चरित्र, भाग पहिला	१॥)
,, ,, ,, भाग दूसरा	१॥)
दादू दयाल की बानी, भाग १ "साखी" १॥) भाग २ "शब्द" ...	१)
सुंदर विलास	१-)
पलटू साहिब भाग १—कुंडलियाँ	॥)
,, भाग २—रेख़्ते, झूलने, अरिल, कवित्त, सवैया ...	॥)
,, भाग ३—भजन और साखियाँ	॥)
जगजीवन साहिब की बानी भाग पहला ॥-) भाग दूसरा	॥-)
दूलन दास जी की बानी	।)॥
चरनदासजी की बानी और जीवन-चरित्र, भाग प० ॥-), भाग दू० ...	॥)
ग़रीबदास जी की बानी और जीवन-चरित्र	१।-)
रैदास जी की बानी और जीवन-चरित्र	॥)
दरिया साहिब (बिहार वाले) का दरिया सागर और जीवन-चरित्र ...	।=)॥
,, ,, के चुने हुए पद और साखी	।-)
दरिया साहिब (मारवाड़ वाले) की बानी और जीवन-चरित्र ...	।≡)
भीखा साहिब की शब्दावली और जीवन-चरित्र	।≈)॥

गुलाल साहिब (भीखा साहिब के गुरु) की बानी और जीवन-चरित्र ... ।।।)
बाबा मलूकदास जी की बानी और जीवन चरित्र ... ।।)
गुसाईं तुलसीदास जी की बारहमासी ... ...)
यारी साहिब की रत्नावली और जीवन-चरित्र ... ... ≈)
बुल्ला साहिब का शब्दसार और जीवन-चरित्र ... ... ।)
केशवदास जी की अमीघूंट और जीवन-चरित्र ... ...)।।
धरनीदासजी की बानी और जीवन-चरित्र ... ... ।≈)
मीरा बाई की शब्दावली और जीवन-चरित्र ... ... ।।)
सहजो बाई का सहज-प्रकाश और जीवन-चरित्र ... ... ।≡)।।
दया बाई की बानी और जीवन-चरित्र ... ... ।)
संतबानी संग्रह, भाग १ [साखी] ... ... १।।)
[प्रत्येक महात्मा के संक्षिप्त जीवन-चरित्र सहित]
" " भाग २ [शब्द] ... ... १।।)
[ऐसे महात्माओं के संक्षिप्त जीवन-चरित्र सहित जो भाग १ में नहीं दी हैं]

कुल ३३।–)

दूसरी पुस्तकेँ

लोक परलोक हितकारी सपरिशिष्ट [जिसमेँ ऐतिहासिक सूची व १०२ स्वदेशी और विदेशी संतोँ, महात्माओँ और विद्वानोँ और ग्रंथोँ के अनुमान ६५० चुने हुए वचन १९२ पृष्ठोँ मेँ छपे हैँ] तसवीर सहित
सजिल्द १।)
बेजिल्द ।।।=)
(परिशिष्ट लोक परलोक हितकारी)
अहिल्याबाई का जीवन चरित्र अँग्रेज़ी पद्य में ... ... ≡)
सिद्धि ... नागरी सीरीज़ ... ... ≡)
उत्तर ध्रुव की भयानक यात्रा ... ...
"गायत्री सावित्री" स्त्रियों के लिए अत्यन्त उपयोगी औ...

दाम में डाक महसूल व रजिस्टरी ... लिया जायगा।

[सन् १९२१]

मनेजर

धरनीदासजी
का
जीवन-चरित्र

बाबा धरनीदासजी जाति के श्रीवास्तव्य कायस्थ एक बड़े महात्मा थे। इनका जन्म ज़िला छपरा (सूबा बिहार) के माँझी नामी गाँव में संवत १७१३ विक्रमी में हुआ पर चोला छोड़ने का समय ठीक मालूम नहीं होता। माँझी का गाँव सरजू नदी के तट पर उत्तर की ओर बसा है जहाँ अब एक बड़ा पुल रेल का बन रहा है।

धरनीदास जी के पिता का नाम परसरामदास था और घर में खेती का काम होता था। धरनीदास जी आप माँझी के बाबू के दीवान थे और उनके मालिक उनकी बड़ी क़दर करते थे और पूरा भरोसा रखते थे पर उनकी अंतर गति से बेख़बर थे।

कहते हैं कि एक दिन धरनीदास जी ज़मींदारी के काम में लगे हुए थे कि अचानक पानी भरा हुआ लोटा जो पास रक्खा हुआ था उन्हों ने काग़ज़ और बस्ते पर ढलका दिया जिस पर पूछा गया कि ऐसा क्यों किया। धरनीदासजी ने कुछ जवाब न दिया; आख़िर को बाबू की अप्रसन्नता और उन्हें पागल समझ लेने पर उन्हों ने कहा कि जगन्नाथजी के वस्त्र में आरती करते समय आग लग गई थी जिसे मैंने पानी डाल कर बुझाया है। इस कथन का विश्वास बाबू और उनके अधिकारियों

को न हुआ और इनकी हँसी उड़ाई जिस पर धरनीदासजी बस्ता छोड़ कर यह कहते हुए चल दिये—"लिखनी नाहिं करौं रे भाई। मोंहि राम नाम सुधि आई"। राजा ने दो भरोसे के आदमी जगन्नाथपुरी को भेज कर तहक़ीक़ात की तो मालूम हुआ कि सचमुच जिस समय कि बाबा धरनीदास ने लोटे का पानी गिराया वहाँ आग लगी थी जिसे उनकी सूरत का एक आदमी प्रगट हो कर बुझा गया। इस हाल को सुन कर बाबू बड़े लज्जित हुए और आप बाबा धरनीदास को बुलाने और उनसे अपना अपराध छिमा कराने को गये पर उन्हों ने फिर नौकरी पर लौटने से इनकार किया और कहा कि अब हम को भगवत्‌भजन करने दो। बाबू ने बहुत कुछ नक़द और ज़मीन भी उनके गुज़ारे के लिये देना चाहा पर उन्हों ने नामंज़ूर किया।

यही कथा जगन्नाथ पुरी में आग बुझाने की कबीर साहब की बाबत भी प्रसिद्ध है और यह कहाँ तक एतबार के लायक़ है इसे हम पढ़नेवालों की राय पर छोड़ते हैं।

इसके बाद बाबा धरनीदास जी गृहस्थ आश्रम छोड़ कर साधू हो गये और उसी गाँव में एक झोपड़ी डाल कर रहने लगे। कहते हैं कि उन्हों ने गृहस्थ आश्रम में चन्द्रदास नाम के एक साधू से दीक्षा ली थी और भेष लेने पर एक दूसरे साधू सेवानंद को गुरू धारन किया। जो हो इसमें संदेह नहीं कि धरनीदास जी आप ऊँचे दरजे के शब्द-अभ्यासी और गहिरे भक्त थे जिनकी गति उनकी अत्यंत मधुर, प्रेम रस में पगी हुई, और अंतरी भेद की बानी से प्रगट होती है।

कितनी ही करामातें बाबा धरनीदास जी की महिमा की मशहूर हैं मसलन एक बार उनको कई अहीर जाति के चोर रात को मिले और उनसे अपनी राग में गीत गवाई फिर वहाँ से चल कर चोरी को गये और चोरी करने के पीछे आँखों पर ऐसी अँधेरी

आ गई कि रास्ता घर से निकलने का न सूझता था; जब उनको बहुत दुखी देखा तो धरनीदास जी ने अपने बड़े चेले सदानंद जी को दया करके भेजा जो उनको अपने गुरू की सेवा में लाये। उनके सन्मुख पहुंचते ही चोरों की आँखें खुल गईं और वह महात्मा जी के चरनों पर गिर कर सच्चे साधू बन गये।

इसी तरह कहते हैं कि एक बार बहुत से भेष रामत करते हुए आये जिनके भोजन का प्रबंध किया गया पर जब खाने का समय आया तो उन लोगों ने शरारत से कहा कि तुम जाति के कायस्थ हो और द्वारिकाधीश का छाप लगा कर अपनी शुद्धि नहीं की है इससे हम तुम्हारा धान्य ठाकुर जी को कैसे भोग लगा सकते हैं। धरनीदास जी ने हज़ार समझाया पर उन लोगों ने एक न सुनी आख़िर को महात्मा जी बोले कि अच्छा थोड़ी सी मुहलत दो तो हम द्वारिका जाकर छाप ले आते हैं यह कह कर अपनी कुटिया में घुस गये और तुर्तही बाहर निकल कर द्वारिका जी की छाप अपनी बाँह पर दिखला दी जिसको देखकर वह लोग अचरज में आ गये और चरनों पर गिरे।

ऐसे ही धरनीदास जी के शरीर त्याग करने की कथा प्रसिद्ध है कि जब समय आया तो अपने चेलों से कहा कि अब हम बिदा होते हैं यह कह कर उस स्थान पर आये जहाँ गंगा और सरजू का संगम है और जल पर चादर बिछा कर उस पर आसन जमा कर बैठ गये। थोड़ी देर तक धारा के साथ बहते नज़र आये फिर उनके चेलों को दीख पड़ा कि पानी में आग लगी जिसकी लवर आकाश तक उठी और धरनीदास जी गुप्त हो गये।

इन कथाओं पर टीका करना ऐसे भोले भक्तों का जो उन पर सचौटी से बिश्वास करते हैं जी दुखाना होगा, तौ भी इतना कहना अनुचित न होगा कि बाबा धरनीदास सरीखे महात्मा की

महिमा ऐसी सिद्धि शक्ति की कथाओं की मुहताज नहीं है और न सच्चे महात्मा कभी ऐसी करामात दिखलाते हैं।

बाबा धरनीदासजी की गद्दी पर उन के गुरमुख चेले सदानंद जी बैठे। अब तक वह गद्दी क़ायम है और हिन्दुस्तान भर में हज़ारों अनुयायी उनके पंथ के फैले हुए हैं, यद्यपि शब्द-अभ्यास बिरले ही करते हैं। धरनीदासजी के लिखे हुए दो ग्रंथों का पता चलता है—एक 'सत्यप्रकाश' और दूसरा 'प्रेम प्रकाश'।

इस पुस्तक के पद और साखी इत्यादि कुछ तो हम को बाबू सरजूप्रसाद जी मुआफ़ीदार तेरही ज़िला बाँदा ने दिये जिन की सहायता संतबानी पुस्तक-माला के काम में कई बरस से चली आती है और कुछ बाबू धीरजदास जी सेक्रिटरी संतमत सुसैटी, जोतरामराय ज़िला पुरनिया के भेजे हुए वरक़ों से चुने गये हैं, जिन दोनों महाशयों को हम धन्यबाद देते हैं॥

दास,
एडिटर।

इलाहाबाद,
जून सन १९११ ई०

धरनीदास जी की बानी

फुटकर शब्द

(१)

एक पिया मोरे मन मान्यो पति व्रत ठानौँ हो ।
अवरो जो इन्द्र समान, तो तृन करि जानौँ हो ॥१॥
जहँ प्रभु बैसि सिँहासन, आसन डासब हो ।
तहवाँ बेनियाँ डोलइवौँ, बड़ सुख पइवौँ हो ॥२॥
जहँ प्रभु करहिँ लवासन*, पवढ़हिँ आसन हो ।
कर तेँ पग सुहरैवौँ, हृदय सुख पइवौँ हो ॥३॥
धरनी प्रभु चरनामृत, नितहिँ अचइवौँ हो ।
सन्मुख रहिवौँ मैँ ठाढ़ी अंते नहिँ जइवौँ हो ॥४॥

(२)

बहुत दिनन पिय बसल बिदेसा ।
आजु सुनल निज अवन सँदेसा ॥ १ ॥
चित चितसरिया† मैँ लिहलौँ लिखाई ।
हृदय कमल धइलौँ दियना लेसाई ॥ २ ॥

---

*भोजन । †चित्रशाला ।

प्रेम पलँग तहँ धइलौं बिछाई ।
नख सिख सहज सिँगार बनाई ॥ ३ ॥
मन हित अगुमन दिहल चलाई ।
नयन धइल दोउ दुअरा बैसाई* ॥ ४ ॥
धरनी धनि† पल पल अकुलाई ।
बिनु पिया जिवन अकारथ जाई ॥ ५ ॥

(३)

पिया मोर बसैँ गउर गढ़‡, मैं बसौँ प्राग‡ हो ।
सहजहिँ लागु सनेह, उपजु अनुराग हो ॥ १ ॥
असन बसन तन भूषन, भवन न भावै हो ।
पल पल समुझि सुरति, मन गहबरि§ आवै हो ॥२॥
पथिक न मिलहि सजन जन, जिनहिँ जनावौँ हो ।
बिहवल बिकल बिलखि चित, चहुँ दिसि धावौँ हो ॥३॥
होय अस मोहिँ ले जाय, कि ताहि ले आवै हो ।
तेकरि होइबौँ लउँड़िया, जे रहिया बतावै हो ॥४॥
तबहिँ त्रिया पत‖ जाय, दोसर जब चाहै हो ।
एक पुरुष समरथ, धन बहुत न चाहै हो ॥५॥
धरनी गति नहिँ आनि, करहु जस जानहु हो ।
मिलहु प्रगट पट¶ खोलि, भरम जनि मानहु हो ॥६॥

(४)

जहिया भइल गुरू उपदेस । अंग अंग कै मिटल कलेस ॥१॥
सुनत सजग** भयो जीव । जनु अगिनी परै घीव ॥२॥

---

*बिठलाय दिया । †सोहागिन स्त्री । ‡नाम नगर का (अर्थ सपेद शहर) । §पछताना, घबराना । ‖हुर्मत । ¶घूंघट । **जाग उठना ।

उर उपजल प्रभु प्रेम । छुटि गे तब व्रत नेम ॥३॥
जब घर भइल अँजोर* । तब मन मानल मोर ॥४॥
देखे से कहल न जाय । कहले न जग पतियाय ॥५॥
धरनो धनि तिन भाग । जेहिँ उपजल अनुराग ॥६॥

(५)

जग मैँ कायथ जाति हमारी ।
पाये है माला तिलक दुसाला, परमारथ ओहदा री ॥१॥
कागद जहँ लगि करम कमाये, कैँची ज्ञान रसा† री ।
गुरु के चरन अनंद जाप करि, अनुभव वरक‡ उतारी ॥२॥
मन मसिहानी§ साँच की स्याही, सुरति सोफ‖ भरि डारी ।
भरम काटि करि कलम छुरी छवि, तकि तृस्ना खत¶ मारी३
तवलक** तत्त दया के दफ़्दर, संत कचहरी भारी ।
रैयत जगत सब्द कै कौँड़ी, दूजी मार न मारी†† ॥४॥
नाम रतन को भरो खजाना, धरो सो हृदय कोठारी ।
है कोइ परखनहार विवेकी, बारम्बार पुकारी ॥५॥
धरनी साल ब साल अमाली‡‡, जमाखरच यहि पारी ।
प्रभु अपने कर§§ कागज मेरो, लीजे समुझि सुधारी ॥६॥

(६)

मन तुम यहि विधि करो कैथाई ।
सुख संपति कबहूँ नहिँ छीजै, दिन दिन बढ़त बड़ाई ॥१॥

---

*उँजेरा । †तीव्र । ‡पन्ना । §दावात । ‖सुख्ता । ¶क़त जोकि क़लम में चीरा जाता है । **मुट्ठा काग़ज़ोँ का । ††क़ायदा है कि कचहरी (अदालत) मैँ जो क़ुसूरवार समझा जाता है उस को सज़ा या मार दी जाती है परंतु संतोँ की कचहरी मैँ जगत की रैयत (जीवोँ) को शब्द रूपी कौँड़ी (कोड़ा) की मार के सिवाय दूसरी मार नहीँ दी जाती । ‡‡जाँच करने वाला अमला । §§हाथ ।

कसवा* काया करु ओहदा री, चित्त चित्त† धरु साधी।
मोहासिव‡ करि अस्थिर मनुवाँ, मूल मंत्र अवराधी ॥२॥
तत्त को तेरिज§ वेरिज|| बुधि की, ध्यान निरखि ठहराई।
हृदय हिसाव समुझि कै कीजे, थाद्दहिँ हेर्क¶ लगाई ॥३॥
राम को नाम रटो रोजनामा**, मुक्ति सोँ फरद बनाई।
अजपा जाप अवरिजा†† करि के, सर्व कर्म विलगाई ॥४॥
रैयत पाँच पचीस वुझाए, हरि हाकिम रहे राजो।
धरनी जमाखरच विधि मिलि है, को करि सकै गमाजी‡‡ ५

(७)

पानी से पैदा कियो सुनु रे मन वौरे, ऐसा खसम खुदाय कहाई रे।
दाह§§ भयो दस मास को सुनु रे मन वौरे, तर सिर ऊपर पाँई रे१
आँच लगी जब आग की सुनु रे मन वौरे, आजिज है अकुलाई रे।
कवल कियो मुख आपने सुनु रे मन वौरे, नाहक अंक लिखाई रे २
अब की करिहौँ बंदगी सुनु रे मन वौरे, जो पइहौँ मुकलाई||||रे।
जग आये जंगल परे सुनु रे मन वौरे, भरम रहे अरुझाई रे ३
पर की पीर न जानिया सुनु रे मन वौरे, नाहक छुरी चलाई रे।
वाँधि जँजीरे जाइ हौ सुनु रे मन वौरे, वहुरि ऐसहीँ जाई रे ४

*गाँव। †चैतावो। ‡हिसाव करनेवाला या न्याव करने वाला हाकिम। §खुलासा जमाबंदी या हिसाब का। ||मीज़ान या जोड़ती का काग़ज़। ¶मालिक। **रोज़नामचा। ††हिसाब का चिट्ठा। ‡‡ग़बन, चोरी। §§गर्भ की जलन। ||||मुकलना=भेजना; गर्भ में जब बालक बहुत तकलीफ़ पाता है तो मालिक से प्रार्थना करता है कि अब की कष्ट से छुड़ा दो तो अब बंदगी भक्ति करूँगा।

सतगुरु कै उपदेस ले सुनु रे मन बौरे, दोजख दरद मिटाईरे।
मानुप देह दुरलभ है सुनु रे मन बौरे, धरनी कह समुझाई रे।५।

(८)

भाई रे जीभ कहल नहिँ जाई।
नाम रटन को करत निठुराई, कूदि चलै कुचराई* ॥१॥
चरन न चलै सुपंथ पै पग दुइ, अपथ चलै अतुराई†।
देत बार कर दीन्ह दूबरो, लेत करै हथियाई‡ ॥२॥
नैना रूप सरूप सनेही, नाद स्रवन लुबधाई§।
नासा चहतो बास बिपै की, इन्द्री नारि पराई ॥३॥
संत चरन को सीस नवै नहिँ, ऊपर अधिक तराई।
जो मन घेरि बेन्हिये‖ बाँधो, भाजै छाँद¶ तुराई ॥४॥
का सोँ कहौँ कहे को मानै, अंग अंग अकुठाई**।
धरनीदास आस तब पूजै, जो हरि होहिँ सहाई ॥५॥

(९)

मन बसि लेहु अगम अटारी ॥टेक॥
नव नारिन को द्वारा निरखो, सहज सुखमना नारी ॥१॥
अजब अवाज नगारा बाजत, गगन गरजि धुनि भारी ॥२॥
तहँ बरे बाती दिवस न राती, अलख पुरुस मठ धारी ॥३॥
धरनी कै मन कहा न मानै, तबहिँ हनो है कटारी ॥४॥

(१०)

मन रे तू हरि भजु अवरि कुमति तजु,
है रहु विमल बिरागी अनुरागी लो ॥१॥

*बैल के अड़ने को कूचर कहते हैं। †जलदी। ‡देने की बेर अपने हाथ को कमज़ोर कर लेता याने खींचे रहता है और लेने की बेर हाथ फैला देता है। §ख़ाहिशमंद। ‖पकड़ना। ¶रस्सी। **अकुलाता है।

देई देवा सेवा झूँठी, जैसे मरकट मूठी,
अंत बहुरि विलगाने पछिताने लो ॥२॥
जठर अगिन जरै, भोजन भसम करै,
तहँ प्रभु पालल देँही, नित तेही लो ॥३॥
सुत हितु बंधु नारी, इन सँग दिना चारी,
जल सँग परत पखाने*, असमाने लो ॥४॥
पर जन हाथी घोरा, इहव कहत मोरा,
चित्र लिखल पट† देखा, तस लेखा लो ॥५॥
धरनी भिच्छुक वानी, हम प्रभु अज्ञा मानी,
मिलहु पट‡ खोली, अनमोली लो ॥६॥

(११)

मन तुम कस न करहु रजपूती ॥१॥
गगन नगारा बाजु गहागह, काहे रहो तुम सूती ॥२॥
पाँच पचीस तीन दल ठाढ़े, इन सँग सेन§ बहूती ॥३॥
अब तोहि घेरी मारन चाहत, जस पिँजरा महँ तूती ॥४॥
पइहै। राज समाज अमर पद, ह्वै रहु बिमल बिभूती ॥५॥
धरनीदास विचार कहतु है, दूसर नाहिँ सपूती ॥६॥

आरती व भोग

(१)

भक्त बछल|| जब भोग लगावै। पंचामृत षट रस रुचि भावै ॥१॥
आदि कुमारी चउका सारै। चरन पखारि कै वेद विचारै ॥२॥
ब्रह्मा बिस्नु महेसुर देवा। कर जोरे ठाढ़े करि सेवा ॥३॥

---

*ओला। †पटरी। ‡किवाड़। §फ़ौज। ||भक्त बत्सल।

आरति सेत अनंत विराजै। सहजहिँ सब्द अनाहद गाजै ॥४॥
धरनी प्रभु देवन को देवा। मानि लेत सब जन की सेवा ॥५॥

(२)

मन वच क्रम मोरे राम कि सेवा। सकल लोक देवन को देवा १
बिनु जल जल भरि भरि नहवावौँ। बिना धूप के धूप धुपावौँ २
बिन घंटा घरी घंट वजावौँ। बिनहिँ चँवर सिर चँवर ढुरावौँ३
बिन आरति तहँ आरति वारौँ। धरनी तहँ तन मन धन वारौँ ४

॥ चितावनी गर्भ लीला ॥

॥ रेखता ॥

जै जै उचारो, "धरनी" ध्यान धारो।
तजो मन विकारो, भजो प्रान प्यारो ॥१॥
जबै गर्भ वासा, कियो मानुहिँ खासा।
बनो माथ हाथा, चरन पीठ साथा ॥२॥
लगो पेट ग्रीवा*, अहुट हाथ सीवा।
रकत मास हड्डी, तुचा रोम चड्ढी ॥३॥
कियो दसव द्वारा, पवन प्रान धारा।
तहाँ प्रान प्यारा, दियो आय चारा ॥४॥
बँधे अष्ट गाता, अधो मुख झुलाता।
भयो कष्ट भारी, तो कहता पुकारी ॥५॥
नरक तेँ निकारो, हौँ बंदा तिहारो।
करौँ भक्ति ऐसी, कहौँ आज जैसी ॥६॥

---

*गर्दन।

चरन चित्त लावौँ, न काहू दुखावौँ ।
दया करि दयाला, उहाँ तेँ निकाला ॥७॥
कछुक दिन अचेते, गये दूध लेते ।
बहुरि अन्न पानी, बचा बोल जानी ॥८॥
कही काहु माता, पिता बहिन भाई ।
लगो काहु चाचा चचानी सगाई ॥९॥
ममेरा फुफेरा खलेरा[*] घनेरा ।
अरोसी परोसी चिन्हो चेर चेरा ॥१०॥
कुला कर्म जानो यगानो बिगानो ।
उहाँ गुष्ट[†] कीन्हो सो भरमो भुलानो ॥११॥
गई बालवस्था भयो देँह कामा ।
बहू व्याह लाये बजाये दमामा ॥१२॥
घोड़े बटोरे बराती बनाये ।
बड़े डिँभ[‡] करि कै बहू व्याह लाये ॥१३॥
त[§] दुनिया के परिपंच देखौ जु आये ।
अपहिँ आपने पाँव बेरी बँधाये ॥१४॥
खनी खंदकै कोट कीन्हो कँगूरा ।
महल के टहल मेँ घनेरे मजूरा ॥१५॥
माया को पसारा कियो फौज भारी ।
बड़ी साहबी चाँप कीन्हो सवारी ॥१६॥
कबहुँ जाय पच्छिन सेँ पंछी धरावै ।
कबहुँ जंगली जीव कुत्तन तुरावै ॥१७॥

---

*मवसियावल नाता । †जो गर्भ में प्रतिज्ञा की थी । ‡धूमधाम, राटराग । §तौ ।

कबहुँ जाल जंजाल मच्छी बझावै ।
कबहुँ बन घेरावै अगिन से जरावै ॥१८॥
सो तोपैं गढ़ावै गढ़ी को ढहावै ।
कबहुं बंद बेसी मवेसी ले आवै ॥१९॥
बड़े चाक चौखूट ईंटा पकावै ।
जड़ै पाथरै नक्सगीरी करावै ॥२०॥
धरा धौरहर धवल ऊँचो उठावै ।
तहाँ जोरि आछे बिछौना बिछावै ॥२१॥
तहाँ फूल फैलो लगे तूल तकिया ।
दरीची बरीची उठै झाँक झँकिया ॥२२॥
सिपाही घनेरे खड़े सीस नावैं ।
किते भिच्छुको झूँठ सोभा सुनावैं ॥२३॥
हरिन माल* मेढ़ा व हस्ती लड़ावै ।
नई नागरी नारि† नाटिन नचावै ॥२४॥
घरी को बजावै समुझि जिय न आवै ।
हरै धन बिराना धसोरा‡ लगावै ॥२५॥
कतेको भले जीव सूली चढ़ावै ।
महा मस्त ह्वै मुंड-माला बँधावै ॥२६॥
जो हरि की भगति जीव-दाया दिढ़ावै ।
करै ता की निंदा नगीचा न आवै ॥२७॥
बिलोका पसारा मनहिँ मन बिचारा ।
जगत जेर मारा जिवन धर हमारा ॥२८॥

*पहलवान । †पतुरिया । ‡धाँधली ।

त करता कला देखि ऐसो विचारा ।
लगे दूत गैबी पलंगै पछारा ॥२९॥
किते वैद वैठे करैं औपधाई ।
किसेको करैं आप संसा ओझाई* ॥३०॥
किते जंत्र तावीज लीखैं लिखावैं ।
कितेको सगुनिया झरावैं फुकावैं ॥३१॥
कहैं आज ऐसो मिलै जो जियावै ।
वरावर कया† भार सोना सो पावै ॥३२॥
जवहिं जुक्ति जगदीस ऐसी वनाई ।
तवहुं राम को नाम निहचै न आई ॥३३॥
तकावै तवेला झुमेला‡ के हाथी ।
परो वूझि यह दाँव संगी न साथी ॥३४॥
खजाना रुपइया सोनइया§ जहाँ हीं ।
रही सुंदरी जो जहाँ सो तहाँ हीं ॥३५॥
कमाई समुझि जीव आई रोआई ।
गये ऐसहीं जन्म भक्ती न आई ॥३६॥
चलावन‖ चहै जाहि जगदीस रइया ।
कहो ताहि को जग कवन है रखइया ॥३७॥
दैव को न जाना दिया सो वुझाना ।
जगीरी तगीरी व थाना निसाना ॥३८॥
पयानो पयानो¶ पुकारैं जु लोगा ।
त रोवै कवीला परो मुंड सोगा ॥३९॥

---

*ओझा जो जंत्र मंत्र करते हैं । †काया, देह । ‡झूमने वाला । §सोना ।
‖बुलाना । ¶ निकालो निकालो ।

जना चारि आये वहाँ तें उठाये ।
अगिन मैं जराये नदी मैं बहाये ॥४०॥
पिन्हाये कफन खोदि खादे गड़ाये ।
जु दीवान साहब सलामत को आये ॥४१॥
प्रबोधो न पाँचो वहुत नाच नाचो ।
कला खेलि खाली चले इन्द्रजाली* ॥४२॥
जहाँ धर्मराया चितरगुप्र छाया ।
उहाँ पत्र देखा सुकृत की न रेखा ॥४३॥
नहीं नाम गाया नहीं जीव दाया ।
भगति की न भेवा नहीं साधु सेवा ॥४४॥
जुआ जन्म हारे वे गुरु के विचारे ।
भुलाने अनारी परो बीचि भारी ॥४५॥
गये यहि प्रकारा किलेको भुत्रारा† ।
अत्रर जो वेचारा करे को सुमारा ॥४६॥
गये कौरवो और सिसुपाल रावन ।
गये छप्पनो कोटि जादव कहावन ॥४७॥
गये चक्कवे चक्रवर्ती कहाये ।
गये मंडली कोउ सँदेसो न पाये ॥४८॥
गये साकबंधी सका बाँधि केते ।
ते माटी मिले बीर बलवान जेते‡ ॥४९॥

---

*काम क्रोध आदिक पाँचो दूत को रोका नहीं बलिक इन्हीं का नाच नाचते थे सो मरने पर ऐसाही हुआ जैसे कि इन्द्रजालवाला तमाशा कर के चल देता है। †भुवाल=राजा। ‡ऐसे राजा जिन का शाक चलता है और शूर बीर धूल मैं मिल गये।

गये खानखानाँ सुलताँ छत्रधारी ।
गये मीर उमरा करोरौं हजारी ॥५०॥
जो वेगम वेचारी गमे* मार डारी ।
हुती प्रान-प्यारी सो नारी पवारी ॥५१॥
गये रावना और रानी गुमानी ।
तिन्हौं की कहो धौं कहाँ है निसानी ॥५२॥
गये लखपती जो धजा वाँधि कोटी ।
दियो डारि पाँसा लई मारि गोटी ॥५३॥
हिये चेति चेतो चितौनी चिताऔं ।
सँभारो सँभारो अगाऔं अगाऔं† ॥५४॥
भरे दाग पीछे जतन कर धुवइये ।
अगाऊँ नहीं दाग के वाट जइये ॥५५॥
कृपा तें भई मानुषा देंह यारो ।
चलो राह नेकी वदी को विसारो ॥५६॥
भगति भाव चूके सोई भवन फूँके ।
जिन्हौं भक्ति भैंटा जरा मरन मेटा ॥५७॥
सोई जन सुभागे उलटि पंथ लागे ।
हिये दाग दागे पिया प्रेम पागे ॥५८॥
भगति ध्रुव कमाया अचल राज पाया ।
भले आपु जागे अवर को जगाया ॥५९॥
त प्रहलाद अहलाद§ बहु भक्ति धारी ।
तपै इन्द्र‖ कैसो सकै कौन टारी ॥६०॥

*शोक । †आगे ही से । §उमंग से । ‖उन को इंद्र कितनाही दुख दे पर भक्ति से नहीं टाल सकता ।

मोरधुज* तम्रधुज* जनक* अम्मरीषा* ।
जुधिष्ठिर* भरथ* गोपिचंदे* परीछा* ॥६१॥
विभीषन को देखे कि जो भक्ति साजे ।
अजहुँ लोक निकलंक निरसंक गाजे ॥६२॥
भगति भरथरी की अवर जानि पीपा ।
जिन्हों का अमर नाम है दीप दीपा ॥६३॥
कबीरा* गोरखनाथ* मीरा* बड़ाई ।
कामा* व नामा* सुदामा* भलाई ॥६४॥
सुकदेव* जयदेव* सोभा सुहाई ।
रैदास* सेना* धना* धीरताई ॥६५॥
अमर नाम अहमद* तजी पादसाही ।
दुनी† में प्रगट प्रेम जा को सराही ॥६६॥
फकीरी करै कोउ साँचे अकीदा ।
मिसाले रहीमा* वजीदा* फरीदा* ॥६७॥
नीके जानि के चत्रभुज* चित्त लाया ।
भजी लोक लज्जा तजी मोह माया ॥६८॥
विराजे जहाँ लौं भगत लोक माहीं ।
कहाँ लौं कहौं संत को अंत नाहीं ॥६९॥
सकल संत दाया चितवनी चिताया ।
धरनिदास आया सरन राम राया ॥७०॥

---

*भक्तों के नाम । †दुनिया ।

॥ शब्द ॥

(राग सारंग)

॥ १ ॥

भइ कंत दरस बिनु बावरी ।
मो तन ब्यापै पीर प्रीतम की, मूरुख जानै आवरी ॥१॥
पसरि गयो तरु प्रेम साखा सखि, बिसरि गयो चित चाव री ।
भोजन भवन सिंगार न भावै, कुल करतूति अभाव री ॥२॥
खिन खिन उठि उठि पंथ निहारौं, बार बार पछिताँव री ।
नैनन अंजन नींद न लागै, लागै दिवस बिभाव* री ॥३॥
देँह दसा कछु कहत न आवै, जस जल ओछे नाव री ।
धरनी धनी अजहुँ पिय पाऔं, तौ सहजै अनँद बधाव री ॥४॥

॥ २ ॥

हरि जन हरि के हाथ बिकाने ।
भावै कहो जग धृग जीवन है, भावै कहो बौराने ॥१॥
जाति गँवाय अजाति कहाये, साधु सँगति ठहराने ।
मेटो दुख दारिद्र परानो†, जूठन खाय अघाने ॥२॥
पाँच जने परबल परपंची, उलटि परे बंदिखाने ।
छुटी मजूरी भये हजूरी, साहब के मन माने ॥३॥
निरममता निरबैर सभन तेँ, निरसंका निरबाने ।
धरनी काम राम अपने तेँ, चरन कमल लपटाने ॥४॥

॥ ३ ॥

हरि जन वा मद के मतवारे ।
जो मद बिना काठि बिनु भाठी, बिनु अगिनहिँ उदगारे ॥१॥

*धुरा । †भागा ।

घास अकास घराघर भीतर, बुंद झरै झलका रे ।
चमकत चंद अनंद बढ़ो जिव, सब्द सघन निरुवारे ॥२॥
बिनु कर धरे बिना मुख चाखे, बिनहिं पियाले ढारे ।
ताखन* स्यार सिंह को पौरुप, जुत्थ गजंद बिडारे ॥३॥
कोटि उपाय करै जो कोई, अमल न होत उतारे ।
धरनी जो अलमस्त दिवाने, सोइ सिरताज हमारे ॥४॥

॥ ४ ॥

हित करि हरि नामहिं लाग रे ।
घरी घरी घरियाल पुकारै, का सोवै उठि जाग रे ॥१॥
चोआ चंदन चुपड़ तेलना, और अलबेली पाग रे ।
सो तन जरे खड़े जग देखो, गूद निकारत काग रे ॥२॥
मात पिता परिवार सुता सुत, बंधु त्रिया रस त्याग रे ।
साधु के संगति सुमिर सुचित होइ, जो सिर मोटे भाग रे॥३
सम्वत जरै वरै नहिं जब लगि, तब लगि खेलहु फाग रे ।
धरनीदास तासु बलिहारी, जहँ उपजै अनुराग रे ॥४॥

॥ ५ ॥

ऐसे राम भजन करु बावरे ।
वेद साखि जन कहत पुकारे, जो तेरे चित चाव रे ॥१॥
काया द्वार है निरखु निरंतर, तहाँ ध्यान ठहराव रे ।
तिरबेनी एक संगहिं संगम, सुन्न सिखर कहँ धाव रे ॥२॥
हद्द उलंघि अनाहद निरखो, अरध उरध मधि ठाँव रे ।
राम नाम निसु दिन लव लागै, तबहिं परम पद पाव रे॥३
तहँ है गगन गुफा गढ़ गाढ़ो, जहाँ न पवन पछाँव रे ।
धरनीदास तासु पद बंदै, जो यह जुगति लखाव रे ॥४॥

*तत्छन=चटपट ।

॥ ६ ॥

मेरो राम भलो व्यौपार हो ।
वा सोँ दूजा दृष्टि न आवै, जाहि करो रोजगार हो ॥१॥
जौ खेती तौ उहै कियारी, बिनु बीज बैल हर फार हो ।
रात दिवस उद्दम करे, गंग जमुन के पार हो ॥२॥
बनिज करो तौ उहै परोहनु*, भरो विविधि परकार हो ।
लाभ अनेक मिले सतसंगति, सहजहिं भरत भँडार हो ॥३
जो जाचौ† तौ वाहि को जाचौ, फिरौ न दूजे द्वार हो ।
धरनी मन वच क्रम मन मानो, केवल अधर अधार हो ॥४

(राग गंधार)

॥ १ ॥

जुगजुग संतन की बलिहारी ।
जो प्रभु अलख अमूरत अविगत, तासु भ री
मन वच क्रम जगजीवन को व्रत, जीवन
संतन साँच कही सबहिन तैं, सुत पितु
ढोलिया ढोल नगर जो मारै, गृह गृह
गोधन जुत्थ पार करिबे को, पीटत पी
एहि जग हरि भगता पतिवरता, अवर
धरनी धृग जीवन है तिन्ह को, जिन्ह

॥ २ ॥

जो जन भक्त वछल उपवासी§,
ता को भवन भयो उँजियारो,

*गाड़ी । †माँगो । ‡गौओं के झुंड को
को पीठ पर लाठी मारते हैं । §सेवक ।

लोक लाज कुल कानि बिसारी, सार सब्द को गासी।
तिन्ह को सुजस दसो दिसि बाढ़ो, कवन सकै करि हाँसी॥२
हरि ब्रत सकल भक्त जन गहि गहि, जम तें रहे मवासो*
देँह धरी परमारथ कारन, अंत अभैपुर बासी॥३॥
काम क्रोध तृस्ना मद मिथ्या, सहज भये बनबासी†।
संतत‡ दीन दयाल दयानिधि, धरनी जन सुखरासी॥४॥

(राग बेलावल)

॥ १ ॥

मोहिँ कछु नाहिँ बिसाय, कोउ कैसहु कहि जाव री॥टेक
झाँकि झरोखे रावला, मन मोहन रूप देखाव री।
दृष्टि परे परबस पस्यो घर, घरहु न मोहिँ सोहाय री॥१
जस जलचर जल मैँ चरै, मुख चारो सहज समाय री।
निगलत तो वहि निर्भय, अब उगलत उगलि न जाय री॥२
जस पंछी बन बैठियो, अपनो तन मन ठहराय री।
नर§ को भेद न भेदियो, पर अवचक लागे आय री॥३॥

॥ दोहा ॥

जाहि परो दुख आपनो, सो जानै पर पीर।
धरनी कहत सुन्यो नहीँ, बाँझ को छाती छीर॥

॥ २ ॥

तब कैसे करिहौ राम भजन।
अबहिँ करौ जब कछु करि जानौ, अवचक
कौँच‖ मिलैगो तंन॥१॥

*रक्षा में, बचे हुए। †निकसुआ, ख़ारिज। ‡निरंतर। §नरकुल जिसमें लासा लगा कर चिड़िया फँसाते हैं। ‖मही।

॥ ६ ॥

मेरो राम भलो व्यौपार हो ।
वा सोँ दूजा दृष्टि न आवै, जाहि करो रोजगार हो ॥१॥
जो खेती तो उहै कियारी, बिनु बीज बैल हर फार हो ।
रात दिवस उद्दम करे, गंग जमुन के पार हो ॥२॥
बनिज करो तो उहै परोहन्*, भरो बिविधि परकार हो ।
लाभ अनेक मिले सतसंगति, सहजहिँ भरत भँडार हो ॥३॥
जो जाचौ† तो वाहि को जाचौ, फिरो न दूजे द्वार हो ।
धरनी मन वच क्रम मन मानो, केवल अधर अधार हो ॥४॥

(राग गंधार)

॥ १ ॥

जुगजुग संतन की बलिहारी ।
जो प्रभु अलख अमूरत अविगत, तासु भजन निरधारी॥१॥
मन वच क्रम जगजीवन को ब्रत, जीवन को उपकारी ।
संतन साँच कही सबहिन तेँ, सुत पितु भूप भिखारी ॥२॥
ढोलिया ढोल नगर जो मारै, गृह गृह कहत पुकारी ।
गोधन जुत्थ पार करिबे को, पीटत पीठि पहारी‡ ॥३॥
एहि जग हरि भगता पतिबरता, अवर बसै बिभिचारी ।
धरनी धृग जीवन है तिन्ह को, जिन्ह हरि नाम बिसारी॥४॥

॥ २ ॥

जो जन भक्त वछल उपवासी§ ।
ता को भवन भयो उँजियारो, प्रगटी जोति दिवा सी ॥१॥

---

*गाड़ी । †माँगो । ‡गौओं के झुंड को इधर उधर बिचर जाने से बचाने को पीठ पर लाठी मारते हैँ । §सेवक ।

लोक लाज कुल कानि बिसारी, सार सब्द को गासी।
तिन्ह को सुजस दसो दिसि बाढ़ो, कवन सकै करि हाँसी॥२॥
हरि ब्रत सकल भक्त जन गहि गहि, जम तें रहे मवासी*।
देँह धरी परमारथ कारन, अंत अभैपुर बासी॥३॥
काम क्रोध तृस्ना मद मिथ्या, सहज भये बनबासी†।
संतत‡ दीन दयाल दयानिधि, धरनी जन सुखरासी॥४॥

(राग बेलावल)

॥ १ ॥

मोहिँ कछु नाहिँ बिसाय, कोउ कैसहु कहि जाव री॥टेक॥
झाँकि झरोखे रावला, मन मोहन रूप देखाव री।
दृष्टि परे परबस पस्यो घर, घरहु न मोहिँ सोहाय री॥१॥
जस जलचर जल मेँ चरै, मुख चारो सहज समाय री।
निगलत तो वहि निर्भय, अब उगलत उगलि न जाय री॥२॥
जस पंछी बन बैठियो, अपनो तन मन ठहराय री।
नर§ को भेद न भेदियो, पर अवचक लागे आय री॥३॥

॥ दोहा ॥

जाहि परो दुख आपनो, सो जानै पर पीर।
धरनी कहत सुन्यो नहीँ, बाँझ की छाती छीर॥

॥ २ ॥

तब कैसे करिहौ राम भजन।
अबहिँ करौ जब कछु करि जानौ, अवचक
कौंच‖ मिलैगो तँन॥१॥

*रक्षा में, बचे हुए। †निकसुआ, ख़ारिज। ‡निरंतर। §नरकुल जिसमें लासा लगा कर चिड़िया फँसाते हैं। ‖मही।

अंत समो कस सीस उठैहै, बोल न ऐहै दसन रसन*।
थकित नाटिका† नैन स्रवन बल, बिकल सकल अँग नख
सिख सन‡ ॥ २ ॥

ओझा बैद सगुनिया पंडित, डोलत आँगन द्वार भवन।
मातु पिता परिवार बिलखि§ मन, तोरि लिये तन
सब अभरन ॥३ ॥

बार बार गुनि गुनि पछतैहै, परबस परिहै तन मन धन।
धरनी कहत सुनो नर प्रानी, बेगि भजो हरि चरन सरन॥४॥

॥ ३ ॥

एक अलाह के मैं कुरबानी।
दिल ओझल‖ मेरा दिलजानी ॥१॥
तू मेरा साहब मैं तेरा बन्दा।
तू मेरि सभी हवस पहिचन्दा ॥२॥
बार बार तुम कहँ सिर नावौं।
जानि जरूर तुम्हैं गोहरावौं ॥३॥
तुमहिं हमारे मक्का मदीना।
तुमहीं रोजा रिजिक रोजीना ॥४॥
तुमहिं कोरान खतम खतमाना।
तुम तसबी अरु दीन इमाना ॥५॥

*दाँत और ज़बान। †नाड़ी। ‡सिर से-पैर तक। §रो कर। ‖ओट में।

मैं आसिक महबूब तू दरसा ।
बेगर* तोहि जहान जहर सा ॥६॥
देहु दिदार दिलासा एही ।
नातर जाव बिनसि बरु देही ॥७॥
कादिर तुमहिं कदर को जाना ।
मैं हिन्दू किधौं मूसलमाना ॥८॥
धरनीदास खड़े दरवाजा ।
सब के तुमहिं गरीब निवाजा ॥९॥

॥ ४ ॥

मैं निरगुनियाँ गुन नहिं जाना ।
एक धनी के हाथ बिकाना ॥१॥
सोइ प्रभु पक्का मैं अति कच्चा ।
मैं झूँठा मेरा साहब सच्चा ॥२॥
मैं ओछा मेरा साहब पूरा ।
मैं कायर मेरा साहब सूरा ॥३॥
मैं मूरख मेरा प्रभु ज्ञाता ।
मैं किरपिन मेरा साहब दाता ॥४॥
धरनी मन मानो इक ठाउँ ।
सो प्रभु जीवो मैं मरिजाउँ ॥५॥

॥ ५ ॥

दूरि न भाई खसम खुदाई । है हाजिर पहिचानि न जाई ॥१॥
ढूँढो अपना एही वजूदा† । बैठा मालिक महल मजूदा‡ ॥२॥

*बग़ैर, बिना । †शरीर । ‡मौजूद ।

जा को साहब देत वफीक* । चारि पियाला करु तहकीक॥३॥
महरम कोइ मिले जो यार । पल में पहुँचावे दरबार ॥४॥
धरनी बखत-बलंदी† सोइ । जाकी नजरि तमासा होइ॥५॥

॥ ६ ॥

मेरे प्रभु तुमहिँ अवर नहिँ कोइ ।
बहु बिधि कहत सुनत नर लोइ ॥१॥
तुव बिस्वास दास मन मान ।
जुग जुग भगत-बछल जा की बान ॥२॥
अवरन्ह तेँ मेरो होत अकाज ।
छोड़ि कुल कानि बिसरि जग लाज ॥३॥
धरनी जनम हारि भावे जीति ।
अब मन बच क्रम हृदे प्रतीति ॥४॥

॥ ७ ॥

जब लग परम तत्तु नहिँ जाने ।
तब लग भरम भूत नहिँ भाजे, करम कीँच लपटाने॥१
सहस नाम कहि कहा भयो मन, कोटि कहत न अघाने ।
भूले भरम भागवत पढ़ि के, पूजत फिरत पखाने॥२॥
का गिरि कंदरा‡ मन्दर माहँ, कंद मूरि खनि खाने ।
कहा जो बरप हजार रह्यो तन, अंत बहुरि पछिताने३
दानि कबीसुर सरसुती, रंक होउ भा राने ।
प्रेम प्रतीति अमिय परचे बिनु, मिले न पद निरबाने४
मन बच करम सदा निसिबासर, दूजो ज्ञान न ध्याने।
धरनी जन सतगुरु सिर ऊपर, भक्त-बछल भगवाने॥५॥

*तौफ़ीक़ । †भागवान ‡पहाड़ की गुफा ।

(राग टोड़ी)

जब मेरो यार मिले दिल जानो। होइ लवलीन करौं मेहमानी१
हृदय कमल विच आसन सारी। ले सरधा जल चरन खटारी* २
हित कै चंदन चरचि चढ़ायो। प्रीति कै पंखा पवन डोलायो ३
भाव के भोजन परसि जँवायो। जो उबरा सो जूठन पायो ४
धरनी इत उत फिरहि न भोरे†। सन्मुख रहहि दोऊ कर जोरे ५

(राग मट)

॥ १ ॥

करता राम करै सोइ होय।
कल बल छल बुधि ज्ञान सयानप, कोटि करै जो कोय ॥१॥
देई देवा सेवा करिके, भरम भुले नर लोय।
आवत जात मरत औ जनमत, करम काँट अरुझोय ॥२॥
काहे भवन तजि भेष बनायो, ममता मैल न धोय।
मन मवास चपरि‡ नहिँ तोड़ेउ, आस फाँस नहिँ छोय ।३।
सतगुरु चरन सरन सच पायो, अपनी देँह विलोय।
धरनी धरनि फिरत जेहि कारन, घरहिँ मिले प्रभु सोय ॥४॥

॥ २ ॥

प्रभुजी अब जनि मोहिँ बिसारो।
असरन-सरन अधम-जन-तारन, जुग जुग बिरद तिहारो ।१।
जहँ जहँ जनम करम बसि पायो, तहँ अरुझे रस खारो।
पाँचहुँ के परपंच भुलानो, धरेउ न ध्यान अधारो ॥२॥

*धोया। †भूल से। ‡डबरा, तलैया।

अंध गर्भ दस मास निरंतर, नखसिख सुरति सँवारो ।
मंजा* मुत्र अग्नि मल क्रुम जहँ, सहजै तहँ प्रतिपारो ॥३॥
दोजै दरस दयाल दया करि, गुन ऐगुन न विचारो ।
धरनी भजि† आयो सरनागति, तजि लज्जा कुल गारो‡॥४॥

॥ ३ ॥

अजहुँ मन सब्द प्रतीति न आई ॥१॥
चंचल चपल चहूँ दिसि डोलै, तजत नाहिँ चतुराई ॥२॥
सब्द तेँ सुक मुनि सारद नारद, गोरख की गरुआई ॥३॥
सब्द प्रतीत कबीर नामदेव, जागत जक्त दोहाई ॥४॥
सदन धना रैदास चतुरभुज, नानक मीराबाई ॥५॥
संत अनंत प्रतीति सब्द की, प्रगट परम गति पाई ॥६॥
धरनी जो जन सब्द-सनेही, मोहिँ बरनी नहिँ जाई ॥७॥

॥ ४ ॥

जौ लौँ मन तत्तुहिँ नहिँ पकरै ।
तौ लौँ कुमति किवार न टूटै, दया नाहिँ उघरै ॥१॥
काहे के तीरथ ब्रत भटकि भ्रम, थाकि थाकि थहरै ।
मंडप महजिद मुरति सुरति करि, धोखेहिँ ध्यान धरै ॥२॥
काहेके अनत जिवन फल तोरै, का पचि अनल बरै ।
काहेके बल करि जल पर सोवै, भुइँ खनि खँदक परै ॥३॥
दान विधान पुरान सुनै नित, तौ नहिँ काज सरै ।
धरनी भवजल तत्तु नाव री, चढ़ि चढ़ि भक्त तरै ॥४॥

---

*मज्जा=हड्डी का गूदा या सड़ा पंछा । †भाग कर । ‡गाली ।

(राग टोड़ी)

जब मेरो यार मिलै दिल जानो। होइ लवलीन करौँ मेहमानो१
हृदय कमल विच आसन सारी। ले सरधा जल चरन खटारी* २
हित के चंदन चरचि चढ़ायो। प्रीति कै पंखा पवन डोलायो ३
भाव के भोजन परसि जैंवायो। जो उबरा सो जूठन पायो ४
धरनी इत उत फिरहि न भोरे†। सन्मुख रहहि दोऊ कर जोरे ५

(राग भट)

॥ १ ॥

करता राम करै सोइ होय।
कल बल छल बुधि ज्ञान सयानप, कोटि करै जो कोय ॥१॥
देई देवा सेवा करिके, भरम भुले नर लोय।
आवत जात मरत औ जनमत, करम काँट अरुझोय ॥२॥
काहे भवन तजि भेष बनायो, ममता मैल न धोय।
मन मवास चपरि‡ नहिँ तोड़ेउ, आस फाँस नहिँ छोय ॥३॥
सतगुरु चरन सरन सच पायो, अपनी देँह बिलोय।
धरनी धरनि फिरत जेहि कारन, घरहिँ मिले प्रभु सोय ॥४॥

॥ २ ॥

प्रभुजी अब जनि मोहिँ विसारो।
असरन-सरन अधम-जन-तारन, जुग जुग बिरद तिहारो ॥१॥
जहँ जहँ जनम करम बसि पायो, तहँ अरुझे रस खारो।
पाँचहुँ के परपंच भुलानो, धरेउ न ध्यान अधारो ॥२॥

---

*धोया। †भूल से। ‡डबरा, तलैया।

अंध गर्भ दस मास निरंतर, नखसिख सुरति सँवारो ।
मंजा* मुत्र अग्नि मल क्रम जहँ, सहजै तहँ प्रतिपारो ॥३॥
दीजै दरस दयाल दया करि, गुन ऐगुन न विचारो ।
धरनी भजि† आयो सरनागति, तजि लज्जा कुल गारो‡॥४॥

॥ ३ ॥

अजहुँ मन सब्द प्रतीति न आई ॥१॥
चंचल चपल चहूँ दिसि डोलै, तजत नाहिँ चतुराई ॥२॥
सब्द तेँ सुक मुनि सारद नारद, गोरख की गरुआई ॥३॥
सब्द प्रतीत कबीर नामदेव, जागत जक्त दोहाई ॥४॥
सदन धना रैदास चतुरभुज, नानक मीराबाई ॥५॥
संत अनंत प्रतीति सब्द की, प्रगट परम गति पाई ॥६॥
धरनी जो जन सब्द-सनेही, मोहिँ बरनी नहिँ जाई ॥७॥

॥ ४ ॥

जौ लौँ मन तत्तुहिँ नहिँ पकरै ।
तौ लौँ कुमति किवार न टूटै, दया नाहिँ उघरै ॥१॥
काहे के तीरथ ब्रत भटकि भ्रम, थाकि थाकि थहरै ।
मंडप महजिद मुरति सुरति करि, धोखेहिँ ध्यान धरै ॥२॥
काहेके अनत जिवन फल तोरै, का पचि अनल बरै ।
काहेके बल करि जल पर सोवै, भुइँ खनि खँदक परै ॥३॥
दान विधान पुरान सुनै नित, तौ नहिँ काज सरै ।
धरनी भवजल तत्तु नाव री, चढ़ि चढ़ि भक्त तरै ॥४॥

*मज्जा=हड्डी का गूदा या सहा पंछा । †भाग कर । ‡गाली ।

(राग गौरी)

॥ १ ॥

सुमिरो हरि नामहिँ बौरे ॥टेक॥
चक्रहुँ चाहि चलै चित चंचल, मूल मता गहि निस्चल को रे।
पाँचहुँ तेँ परिचै करु प्रानी, काहेके परत पचीस के झौरे*॥१
जौँ लगि निरगुन पंथ न सूझै, काज कहा महि-मंडल दौरे॥२
सब्द अनाहद लखि नहिँ आवै, चारो पन चलि ऐसहिँ गो रे॥४
ज्यौँ तेली को बैल बेचारा, घरहिँ मेँ कोस पचासक भौरे ।५।
दया धरम नहिँ साधु की सेवा, काहेके सो जनमे घर चौरे६
धरनीदास तासु बलिहारी, झूठ तजो जिन्ह साँचहिँ धौ†रे ७

॥ २ ॥

रे बन्दे तू काहे के होत दिवाना ।
एक अलाह दोस्त है तेरा, अवर तमाम बेगाना ॥१॥
कौल करार बिसारि बावरो, मान मनी मन माना ।
आखिर नहिँ दुनियाँ मेँ रहना, बहुरि उहाँई जाना ॥२॥
जाहिर जीव जहान जहाँ लगि, सब मोँ एक खोदाई ।
बहुरि गनीम‡ कहाँ तेँ आया, जा पर छुरी चलाई ॥३॥
दूर नहीँ है दिल का मालिक, बिना दरद नहिँ पैहो ।
धरनी बाँग बुलंद पुकारै, फिरि पाछे पछितैहो ॥४॥

॥ ३ ॥

अब हरि दासि भई, तातेँ गही चरन चित लाय ॥टेक॥
रही लजाय लोक की लज्जा, बिसरि गई कुल कानी।
उपजी प्रीति रीति अति बाढ़ी, बिनुहीँ मोल बिकानी ॥१॥

---

*झमेला । †गहा । ‡शत्रु ।

छाजन भोजन की नहिँ संसय, सहजहिँ सहज कमाये ।
संग सहेलरि छोड़ि कै अब, नेकु नाहिँ बिलगाये ॥२॥
दुखदाई दरसै नहीं हो, दहु दिसि सकल दयाल ।
अपनो प्रभु अपने गृह पायो, छटकि परो जंजाल ॥३॥
अब काहू के द्वार न आवो, नहिँ काहू के जाव ।
धरनी तहँ सच पाइयो, अब जहाँ धनी को नाँव ॥४॥

(राग कल्यान)

जा के गुरु चरनन चित लागा ।
ता के मन की भरम भुलानी, धंधा धोखा भागा ॥१॥
सो जन सोवत अवचकही मैं, सिंह सरीखे जागा ।
धनि* सुत जन धन भवन न भावत, धावत बन बैरागा॥२॥
हरखित हंस दसा चलि आयो, दुरि गयो दुरमत कागा ।
पाँचहुं को परपंच न लागै, कोटि करै जौं दागा† ॥३॥
साँच अमल तहँ झूठ न झाँकै, दया दीनता पागा ।
सत्त सुकृत संतोष समानो, ज्यौं सूई मध धागा ॥४॥
लै मन पवन उरध को धावै, उपजु सहज अनुरागा ।
धरनी प्रेम मगन जन कोई, सोइ जन सूर सुभागा ॥५॥

(राग केदार)

॥ १ ॥

अजहु न गुरु चरनन चित दैहौ ॥टेक॥
नाना जोनि भटकि भ्रमि आये, अब कब प्रेम तीरथहिँ न्हैहौ॥१
बड़ कुल बिभव भरम जनि भूलो, प्रभु पैहौ जब दास कहैहौ॥२॥

---

*स्त्री । †दग़ा ।

एह संगति दिन दस कि दसा है, कथि कथि पढ़ि पढ़ि
पार न पैहौ ॥ ३ ॥
करम भार सिर तेँ नहिँ उतरै, खंड खंड महि-मंडल धैहौ*॥४
बिनु सतगुरु सतलोक न सूझै, जनमि जनमि
मरि मरि पछितैहौ ॥५॥
धरनी हैहा तबही साँचे, सतगुरु नाम हृदय ठहरैहौ ॥६॥

॥ २ ॥

अजहुँ मिलो मेरे प्रान-पियारे ।
दीनदयाल कृपाल कृपानिधि, करहु छिमा अपराध हमारे॥१
कल न परत अति बिकल सकल तन, नैन सकल जनु†
बहत पनारे ।
माँस पचो अरु रक्त रहित भे, हाड़ दिनहुँ दिन होत उघारे॥२
नासा नैन स्रवन रसना रस, इंद्री स्वाद जुआ जनु हारे ।
दिवस दसो दिसि पंथ निहारति, राति बिहात‡ गनत जस तारे॥३
जो दुख सहत कहत न बनत मुख, अंतरगत के हो जाननहारे ।
धरनी जिव झलमलित दीप ज्याैं, होत अँधार करो उँजियारे॥४

(राग बिहागरा)

॥ १ ॥

जग मेँ सोई जीवनि जिया ।
जा के उर अनुराग उपजो, प्रेम प्याला पिया ॥१॥
कमल उलटो भर्म छूटो, अजप जप जपिया ।
जनु अँधारे भवन भीतर, बारि राखो दिया ॥२॥

*दौड़ोगे । †जैसे । ‡बीतती है ।

काम क्रोध समोधियो, जिन्ह घरहि मैँ घर किया ।
माया के परिपंच जेते, सकल जाना छिया ॥३॥
बहुत दिन के बहुत अरुझो, सहजहीं सरुझिया ।
दास धरनी तासु बलि बलि, भूँजियो जिन्ह बिया* ॥४॥

॥ २ ॥

रमैया राम भजि लेहु हो, जा तेँ जनम मरन मिटि जाय ॥टेक॥
सहर बसै एक चैाहटा हो, एकै हाट परवान ।
ताही हाट के बानिया हो, बनिज न भावत आन ॥१॥
तीनि तरे एक ऊपरे हो, बीच बहै दरियाव ।
कोइ कोइ गुरुगम ऊतरे हो, सुरति सरीखे नाव ॥२॥
तीनि लोक तीनि देवता हो, सो जाने नर लोय ।
चैाथे पद परिचै भई हो, सो जन विरले कोय ॥३॥
सोइ जोगी सोई पंडित हो, सोइ बैरागी राव ।
जो एहि पदहिँ बिलोइया हो, धरनी धरे ता के पाँव ॥४॥

॥ ३ ॥

पिय बड़ सुन्दर सखि, बनि गैला सहज सनेह ॥टेक॥
जे जे सुन्दरि देखन आवै, ता कर हरि ले ज्ञान ।
तीन भुवन कै रूप तुलै नहिँ, कैसेके करउँ बखान ॥१॥
जे अगुवा[†] अस कइल धरतुई[‡], ताहि नेवछावरि जाँव ।
जे बाम्हन अस लगन बिचारल, तासु चरन लपटाँव ॥२॥
चारिउ ओर जहाँ तहँ चरचा, आन कै नाँव न लेइ ।
ताहि सखी की बलि बलि जैहौं, जे मोरी साइति[§] देइ ॥३॥

*बीज । [†]बिचौलिया । [‡]मगाई । [§]मुहूर्त्त (ब्याह का) ।

झलमल झलमल झलकत देखो, रोम रोम मन मान ।
धरनी हर्षित गुन गन* गावै, जुग जुग ह्वै जनि आन ॥४॥

॥ ४ ॥

अवचक आइ गैला पिया कै सनेसवा, ताखन† उठलिउँ जागि रे।
राम राम करि घर से निकसलिउँ, जे जहँ से तहँ त्यागि रे ॥१
सत कै सिँघोरा कर पर मोरा, प्रेम पटम्बर पागि रे ।
बाजन लागु चपल चौघरिया, चित्त चतुरता भागि रे ॥२॥
पूर परी कुरखेतहिँ‡ चढ़लिउँ, जन परिजन से बागि§ रे ।
करम भरम कर चिता सजावल, ब्रह्म अगिन तेहिँ लागि रे॥३
धरनी धनि तहँ भक्ति भाँवरी, चित अनुभै अनुरागि रे ।
अबकी गवना बहुरि नहिँ अवना, बोलहु राम सुभागि रे ।४।

(राग पंजर)

॥ १ ॥

तुहि अवलंब हमारे हो ।
भावै पगु नाँगे करो, भावै तुरय‖ सवारे हो ॥१॥
जनम अनेकन बादि गौ, निजु नाम बिसारे हो ।
अब सरनागत रावरी, जन करत पुकारे हो ॥२॥
भवसागर बेरा परो, जल माँझ मँझारे हो ।
संतत¶ दीनदयाल हो, कर पार निकारे हो ॥३॥
धरनी मन बच कर्मना, तन मन धन वारे हो ।
अपनो बिरद निवाहिये, नहिँ बनत बिचारे हो ॥४॥

*अनेक । †तुर्त । ‡कुरुक्षेत्र अर्थात रणभूमि । §अलग होकर । ‖घोड़ा । ¶निरंतर ।

॥ २ ॥

प्रभु तो बिनु के रखवारा ॥टेक॥
हौं अति दीन अधीन अकर्मी, बाउर बैल बेचारा ।
तू दयाल चारो जुग निस्चल, कोटिन्ह अधम उधारा ॥१॥
अबके अजस अवर नहिँ लागै, सरबस तोहिँ बड़ाई ।
कुल मरजाद लोक लज्जा तजि, गह्यो चरन सरनाई ॥२॥
मैं तन मन धन तो पर वार्‌यो, मूरख जानत ख्याला ।
ब्याउर* बेदन† बाँझ न बूझै, बिनु दागे नहिँ छाला ॥३॥
तुलसी भूपन भेप बनायो, स्त्रवन सुन्यो मरजादा ।
धरनी चरन सरन सब पायो, छुटिहै बाद बिवादा ॥४॥

॥ ३ ॥

प्रभु तू मेरो प्रान पियारा ॥टेक॥
परिहरि‡ तोहि अवर जो जाचै, तेहि मुख छीया छारा ।
तो पर वारि सकल जग डारौं, जौ बसि होय हमारा ॥१॥
हिन्दु के राम अल्लाह तुरुक के, बहु बिधि करत बखाना ।
दुहुँ को संगम एक जहाँ, तहवाँ मेरो मन माना ॥२॥
रहत निरंतर अंतरजामी, सब घट सहज समाया ।
जोगी पंडित दानि दसो दिसि, खोजत अंत न पाया ॥३॥
भीतर भवन भयो उँजियारो, धरनी निरखि सोहाया ।
जा निति देस देसंतर धावो, सो घटहीँ लखि पाया ॥४॥

*बच्चे वाली स्त्री । †पीड़ा । ‡छोड़कर ।

॥ ४ ॥

मो सौं प्रभु नाहिँ दुखित, तुम सौं सुखदाई ॥टेक॥
दीनबन्धु बान तेरो, आइ करु सहाई ।
मो सौं नहिँ दीन और, निरखो नर लोई ॥१॥
पतित-पावन निगम कहत, रहत हौ कित गोई* ।
मो सौं नहिँ पतित और, देखो जग टोई ॥२॥
अधम को उधारन तुम, चारो जुग ओई ।
मो तेँ अब अधम आहि, कवन धौं बड़ोई ॥३॥
धरनी मन मनिया, एक ताग मेँ परोई ।
आपन करि जानि लेहु, कर्म फंद छोई† ॥४॥

कबित

॥ १ ॥

किया पट कर्म, तन दया नहिँ धर्म, तजो नहिँ भर्म,
किमि कर्म छूटै ।
दियो बहु दान, करि बिबिध बिधान, मन बढ़ो अभिमान
जम प्रान लूटै ॥
जग्य अरु जोग, तप तीरथ ब्रत नेम करि, बिना प्रभु-प्रेम,
कलि काल कूटै ।
दास धरनी कहै, कौन बिधि निर्बहै, जबै गुरुज्ञान
तब गगन फूटै ॥

---

*गुप्त । †छोड़ा कर, काट कर ।

॥ २ ॥

जीव की दया जेहि जीव व्यापै नहीँ, भूखे न अहार
प्यासे न पानी ।
साधु से संग नहिँ सब्द से रंग नहिँ, बोलि जानै न
मुख मधुर बानी ॥
एक जगदीस को सीस अरपै नहीँ, पाँच पच्चीस
वहु बात ठानी ॥
राम को नाम निज धाम बिस्राम नहिँ, धरनी कह
धरनि मेँ धृग सो प्रानी* ॥

॥ ३ ॥

अधो मुख बास दस मास अवकास नहिँ, जठर मेँ
अनल की आँच बारी ।
बालपन बीति गौ तरुनपन तेज भौ, परे बिप स्वाद
धन धाम नारी ॥
वृद्धपन आइ गौ चौँकि चित चेत भौ, बिना जगदीस
जम त्रास भारी ।
बूझि मन देखु तोहिँ सूझि कछु परत नहिँ, धरनी तजि
चलै गो हाथ झारी ॥

॥ ४ ॥

दुर्लभ देँह बिदेह कहा भयो, अंत को है पुहमी सटना† ।
छिति* छार परो मुख भार‡ जरो, तन गार§ परो
प्रभु जा घट ना ॥

*पृथ्वी पर ऐसे जीव को धिक्कार है । †गर्द में मिलना । ‡भाड़ । §मिट्टी,।

धरनी धरनी* धरु एक धनी पगु, जो कलि को फंद
चहै कटना ।
तजु तीरथ वर्त विधान सचै, करु नाम निरंजन की रटना ॥
॥ ५ ॥
मौत महा उत्कंठ† चढ़ै, नहिँ सूझत अंध अभागहु रे ।
चित चेतु गँवार विकार तजो, जब खेत पड़े कित भागहु रे ॥
जिन बुंद विकार सुधार कियो, तन ज्ञान दियो पगु ता गहु रे ।
धरनी अपने अपने पहरे, उठि जागहु जागहु जागहु रे ॥
॥ ६ ॥
दिन चार को संपति संगति है, इतने लगि कैान मनी करना ।
इक मालिक नाम धरो दिल मैँ, धरनी भवसागर जो तरना ॥
निज हक पहिचानु हकीकत जानु, न छोड़ु इमान दुनी घर ना ।
पग पीर गहो पर-पीर हरो, जिवना न कछू हक है मरना ॥
॥ ७ ॥
जीवन थोर बचा‡ भौ भोर§, कहा धन जोरि करोर बढ़ाये ।
जीव दया करु साधु की संगति, पैहौ अभय पद दास कहाये ॥
जा सन‖ कर्म छपावत हौ, सो तो देखत है घट मैँ घर छाये ।
वेग भजो¶ धरनी सरनी, ना तो आवत काल कमान चढ़ाये ॥
॥ ८ ॥
आवत जात परवाह सदा, धन जोरि बटोरि धरो न कबाहीँ ।
तू महराज गरीब-निवाज, अकाज सकाज की लाज तुमाहीँ ॥

*टेक ; धारना । †वेग या जोश के साथ । ‡बच्चा । §सवेरा । ‖से । ¶भागो ।

जो हिरदे हरि को पद पंकज, सो मत मो मन तें बिसराहीं ।
कह धरनी मनसा बच कर्मना, मोहिं अवर अवलंबन नाहीं ॥

॥ ९ ॥

ज्ञान को बान लगो धरनी, जन सोवत चौंकि अचानक जागे ।
छूटि गयो बिषया बिष बंधन, पूरन प्रेम सुधा रस पागे ॥
भावत बाद बिवाद निखाद*, न स्वाद जहाँ लगि सो सब त्यागे।
मूँदि गईं अँखियाँ तब तें, जब तें हिय में कछु हेरन लागे॥

॥ १० ॥

जननी पितु बंधु सुता सुत संपति, मीत महा हित संतत जोई ।
आवत संग न संग सिधावत, फाँस मया परि नाहक खोई ॥
केवल नाम निरंजन को जपु, चारि पदारथ जेहि तें होई ।
बूझि बिचारि कहै धरनी, जग कोइ न काहु के संग सगोई॥

॥ ११ ॥

दियो जिन्ह प्रान कया सुख सम्पति,
बीच मिले तिन्ह नेह न कौ† ।
होतो कहाँ औ कहा कहि आयो
सो क्यों बिसराय करो कछु औरे ॥
जोग औ त्याग बैराग गहो,
धरनी धन काज कहा पचि दौरे ।
अंतहिं तो तजिहै सब तोहिं,
सो तू न तजै अबहीं क्यों न बौरे ॥

*निषेध । †कर

॥ ककहरा ॥

(१)

प्रथम करता पुरुष को, कर जोरि मस्तक नाउँ ।
ककहरा निरवारि निर्मल, बोलि सबै सुनाउँ ॥१॥
क–कया परिचै करहु प्रानी, कवन अवसर जात ।
ख–खोजि ले निजु वस्तु अपनी, छोड़ि दे बहु बात ॥२॥
ग–ग्यान गुरु को कान सुनि, धरु ध्यान त्रिकुटी पास ।
घ–घूमते एक चक्र भँवरा, सेस उड़त अकास ॥३॥
ङ–उदै चंद अनंद उर अति, मोति बरसै धार ।
च–चमक बिजुली रेख दहुँ दिसि, रूप को नहिं पार ॥४॥
छ–छोट मोट न काहु जानौ, सबै एक समान ।
ज–जुक्ति जानै मुक्ति पावै, प्रगट पद निरबान ॥५॥
झ–झूठ झगर पबारि* डारौ, झारि झटकि बिछाव ।
ञ–इन्द्रियन के स्वाद कारन, आपु जनि जहँडाव† ॥६॥
ट–टेक टंडस छोड़ि दे, करु साध सब्द बिबेक‡ ।
ठ–ठौर सो ठहराइ ले, जहँ बसत साहब एक ॥७॥
ड–डार पात समूह साखा, फिरत पार न पाव ।
ढ–ढोल मारत साध जन, नहिं बहुरि ऐसो दाव ॥८॥
न–नाम नौका चढ़ो चित दे, बिना बाद बिबाद ।
त–तहाँ लै मन पवन राखो, जहाँ अनहद नाद ॥९॥
थ–थकित होइ हैं पाँच, अरु पच्चीस रहि हैं थीर ।
द–दसँ द्वारे झलमलै, मनि मोति मानिक हीर ॥१०॥

---

*फेंको । †ठगाव । ‡ढँढसी यानी पाखंडियों का संग छोड़ कर शब्द-अभ्यासी बिबेकी साध का संग कर ।

घ–धोख धंधा जगत वंधा, कथै वहुत उदास ।
न–निरवहैगो[*] तवहिँ जव अभि[†]. अंतरे विस्वास ॥११॥
प–प्रेम जा घट प्रगट भो, तहँ वसै पुन्न न पाप ।
फ–फेरि मन तहँ उलटि धरु, जहँ उठत अजपा जाप ॥१२॥
व–विना मूल के फूल फूल्यो, हिये माँझ मँझार ।
भ–भेदिया कोइ जानिहै, नाहिँ और जाननहार ॥१३॥
म–मूल मंत्र ओंकार अद्भुत, निराधार अनूप ।
य–यहाँ पहुँचहि कोई जन, जहँ छाँह नाहीं धूप ॥१४॥
र–राम जपु निजु धाम धवला[‡], मन हृदै करु विसराम ।
ल–लोक चार विचार परिहरु, प्रीति करु तेहिँ ठाम ॥१५॥
व–वारि तन मन धन जहाँ लौं, जिव पवन अरु प्रान ।
श–समुझि आपा मेटि अपनो, सकल वुधि वल ज्ञान ॥१६॥
ष–खैर रेँड़ वबूर सेहुँड़, सो न फरिहैँ दाख[§] ।
स–सर्व सुन्न के सुन्न एकै, दूसरी जनि राख ॥१७॥
ह–होत नर परमातमा तव, आतमा मिटि जात ।
रहै अचल अवोल अस्थिर, कहै अविचल वात ॥१८॥
क्ष–छुए ताहि पवित्र हूजै, पुजै मन की आस ।
सही करिहै संत जन, जत[‖] कही धरनीदास ॥१९॥

---

*निर्वाह होगा । †हृदय । ‡सफ़ेद । §छोहारा । ‖यति=जैसा कि ।

ट–टारि दे निज् भजन सेती, जन्म जन्म विकार ।
एक भक्ति बिनु मुक्ति नाहीं, कोटि करहु बिचार ॥११॥
ठ--ठाँव सोई सराहिये, जहँ बरसई जल धार ।
इक पिंगल बिच अंतरे, तहँ प्रेम धुनि ओंकार ॥१२॥
ड--डंभ औ पट स्वाद जारो ब्रह्म अग्नि प्रचारु ।
अपनो सीप रहिकै, द्वादसो र मारु ॥१३॥
कठिन ए यार देखो, नाथ की यह रीति ।
पाँति बिसाइ नाहीं, भक्तजन सोँ प्रीति ॥१४॥
र राखो, उर्ध सोँ करु नेह ।
परग दीन्हो, छुटो भरम सँदेह ॥१५॥
, जहँ सक्ति सीव निवास ।
खोजहिँ, संत करहिँ निवास॥१६॥
, जस सलिल† मैँ नीर ।
न पुनि, करत कृत बेपीर‡ ॥१७॥
, प्रीति करु वहि देस ।
, ब्रह्म नटवर§ भेस ॥१८॥
जहँ उठत अजपा जाप ।
छुटै जम को दाप‖ ॥१९॥
दूसरो अस स्वाद ।
सब तजो बाद बिबाद ॥२०॥
, जहाँ जोति अपार ।
जब प्रगट हूँ अनुसार ॥२१॥

के सनमुख करनी करता है । §बाँका,

(२)

क–कायापुर मेँ अलख फूलै, तहाँ करु पैसार* ।
सुरत द्वादस लाइ कै, तुम बाद करहु हँकार† ॥१॥
ख–खड्‌ग गहि गुरु ज्ञान को, तब मारु पाँच पचीस ।
उनमुनी घर रहनि करि, तुम जपो जन जगदीस ॥२॥
ग–गगन धुनि मन मगन भो, करु प्रेम तत्त प्रकास ।
ज्ञान अंकुस देइ के, गज‡ राखु त्रिकुटी पास ॥३॥
घ–घेरि है मन मोह माया, कहूँ नाहिँ निकार ।
संत जन जेहि पंथ कहहीं, ताहि चेतु गँवार ॥४॥
ङ–अवधपुर§ मेँ जाइ के, तू देखु ब्रह्म सुहाव ।
तहँ लोकचार‖ बिचार नाहीं, वेद को नहिँ भाव ॥५॥
च–चारि दिन सुख कारने, नर भुलो सकल सयान ।
काम क्रोधहिँ कैद करिके, परसु पद निर्बान ॥६॥
छ–छुटा भो अभि¶ अंतरे, मन गयो सहज अकास ।
तहँ सुखमना दह** कमल फूलो, सेत भँवर तेहिँ पास ॥७॥
ज–जनम दुर्लभ जात है, नहिँ जक्त कोउ पतियाय ।
बहुरि न ऐसो दाँव पैहैा, लेहु उरध बनाय ॥८॥
झ–झपी है†† जहँ बातु झिलमिल, अभय घर उँजियार ।
तहाँ अमृत बुंद बरसै, जोगि करत अहार ॥९॥
ञ–आदि इंद्र सुकादि‡‡ खोजहिँ, पार किनहुँ न पाय ।
तुम आपु अपनी सीख रहि कै, द्वार दसम समाय ॥१०॥

---

*पैठारी, पहुंच। †अहंकार। ‡हाथी अर्थात मन। §संतों का दसवाँ द्वार। ‖लोकाचार। ¶हृदय। **तालाब। ††छिपी है। ‡‡शुकदेव आदिक ऋषि मुनि।

ट--टारि दे निज भजन सेती, जन्म जन्म बिकार ।
एक भक्ति बिनु मुक्ति नाहीं, कोटि करहु बिचार ॥११॥
ठ--ठाँव सोई सराहिये, जहँ बरसई जल धार ।
इक पिंगल बिच अंतरे, तहँ प्रेम धुनि ओंकार ॥१२॥
ड--डंभ औ पट स्वाद जारो ब्रह्म अगिन प्रचारु ।
आपु अपनो सीप रहिकै, द्वादसो सँभारु ॥१३॥
ढ--ढरन* कठिन ए यार देखो, नाथ की यह रीति ।
तहँ जाति पाँति बिसाइ नाहीं, भक्तजन सों प्रीति ॥१४॥
न--नाम को सतभाव राखो, उर्ध सों करु नेह ।
जब अभयपुर कहँ परग दीन्हो, छुटो भरम सँदेह ॥१५॥
त--तहाँ पूरन रहनि करु, जहँ सक्ति सीव निवास ।
ब्रह्मादि औ सनकादि खोजहिं, संत करहिं निवास॥१६॥
थ--थीर नाहीं जगत देखो, जस सलिल† में नीर ।
जात जनमत मरत पुनि पुनि, करत कृत बेपीर‡ ॥१७॥
द--देँहि में कछु दया राखो, प्रीति करु वहि देस ।
सुरति के घर निरति कथिया, ब्रह्म नटवर§ भेस ॥१८॥
ध--ध्यान धरु निसु बासरे, जहँ उठत अजपा जाप ।
बिना रसना मंत्र ठहरै, छुटै जम को दाप‖ ॥१९॥
न--नाम रसना पाइ रे, नहिँ दूसरो अस स्वाद ।
यह मूढ़ को समझाइ कै, सब तजो बाद बिबाद ॥२०॥
प--प्रेम पवन ले तहाँ राखो, जहाँ जोति अपार ।
तब पाप पुन्न नसाइया, जब प्रगट है अनुसार ॥२१॥

*प्रम । †सरित=नदी । ‡बेपीर गुरु के मनमुख करनी करता है । §बाँका, अनूठा । ‖घमंड ।

(२)

क–कायापुर मँ अलख फूलै, तहाँ करु पैसार[*] ।
सुरत द्वादस लाइ कै, तुम वाद करहु हँकार[†] ॥१॥
ख–खड़ग गहि गुरु ज्ञान को, तब मारु पाँच पचीस ।
उनमुनी घर रहनि करि, तुम जपो जन जगदीस ॥२॥
ग–गगन धुनि मन मगन भो, करु प्रेम तत्त प्रकास ।
ज्ञान अंकुस देइ के, गज[‡] राखु त्रिकुटी पास ॥३॥
घ–घेरि है मन मोह माया, कहूँ नाहिँ निकार ।
संत जन जेहि पंथ कहहीं, ताहि चेतु गँवार ॥४॥
ङ–अग्रधपुर[§] मँ जाइ के, तू देखु ब्रह्म सुहाव ।
तहँ लोकचार[||] विचार नाहीं, वेद को नहिँ भाव ॥५॥
च–चारि दिन सुख कारने, नर भुलो सकल सयान ।
काम क्रोधहिँ कैद करिके, परसु पद निर्बान ॥६॥
छ–छुटा भो अभि[¶] अंतरे, मन गयो सहज अकास ।
तहँ सुखमना दह[**] कमल फूलो, सेत भँवर तेहिँ पास ॥७॥
ज–जनम दुर्लभ जात है, नहिँ जक्त कोउ पतियाय ।
बहुरि न ऐसो दाँव पैहौ, लेहु उरध बनाय ॥८॥
झ–झपी है[††] जहँ वस्तु झिलमिल, अभय घर उँजियार ।
तहाँ अमृत बुंद बरसै, जोगि करत अहार ॥९॥
ञ–आदि इंद्र सुकादि[‡‡] खोजहिँ, पार किनहुँ न पाय ।
तुम आपु अपनी सीख रहि कै, द्वार दसम समाय ॥१०॥

---

[*] पैठती, पहुंच। [†] अहंकार। [‡] हाथी अर्थात मन। [§] संतों का दसवाँ द्वार। [||] लोकाचार। [¶] हृदय। [**] तालाब। [††] छिपी है। [‡‡] शुकदेव आदिक ऋषि मुनि।

ट—टारि दे निज भजन सेती, जन्म जन्म बिकार ।
एक भक्ति बिनु मुक्ति नाहीं, कोटि करहु बिचार ॥११॥
ठ--ठाँव सोई सराहिये, जहँ बरसई जल धार ।
इक पिंगल बिच अंतरे, तहँ प्रेम धुनि ओंकार ॥१२॥
ड--डंभ औ पट स्वाद जारो ब्रह्म अगिन प्रचारु ।
आपु अपनो सीप रहिकै, द्वादसो रंभारु ॥१३॥
ढ--ढरन* कठिन ए यार देखो, नाथ की यह रीति ।
तहँ जाति पाँति बिसाइ नाहीं, भक्तजन सों प्रीति ॥१४॥
न--नाम को सतभाव राखो, उर्ध सों करु नेह ।
जब अभयपुर कहँ परग दीन्हो, छुटो भरम सँदेह ॥१५॥
त--तहाँ पूरन रहनि करु, जहँ सक्ति सीव निवास ।
ब्रह्मादि औ सनकादि खोजहिं, संत करहिं निवास॥१६॥
थ—थीर नाहीं जगत देखो, जस सलिल† में नीर ।
जात जनमत मरत पुनि पुनि, करत कृत बेपीर‡ ॥१७॥
द—दँहि में कछु दया राखो, प्रीति करु वहि देस ।
सुरति के घर निरति कथिया, ब्रह्म नटबर§ भेस ॥१८॥
ध--ध्यान धरु निसु बासरे, जहँ उठत अजपा जाप ।
बिना रसना मंत्र ठहरै, छुटै जम को दाप‖ ॥१९॥
न—नाम रसना पाइ रे, नहिं दूसरो अस स्वाद ।
यह मूढ़ को समझाइ कै, सब तजो वाद बिबाद ॥२०॥
प—प्रेम पवन ले तहाँ राखो, जहाँ जोति अपार ।
तब पाप पुन्न नसाइया, जब प्रगट है अनुसार ॥२१॥

---

*प्रन । †सरित=नदी । ‡बग़ैर गुरु के मनमुख करनी करता है । §बाँका, अनूठा । ‖घमंड ।

फ–फरन लागो प्रेम तरु*, जहँ गगन गूफा माहिँ ।
तहँ भानु सति कै उदै नाहीँ, होत धूप न छाँहिँ ॥२२॥
ब–बरतिये निसु बासरे, जहँ ब्रह्म बिस्नु महेस ।
निगम को जहँ गम्म नाहीँ, जपहिँ ध्रुव फनि सेस ।२३।
भ–भेद पायो भजन को, तब अवर नाहिँ सुहाय ।
जस कृपिन कछु कनक पायो, लियो हृदय जुड़ाय ॥२४॥
म–मोह माया जाल मेँ, नर परो है संसार ।
तुम जोग जुक्ति बिचारि करि कै, उतरु भव जल पार॥२५॥
य–यरा मरन† दुख बहुत पायो, लियो सरन तिहार ।
अब नाम नेम निबाहये, हौँ संत तुव बलिहार ॥२६॥
र–राति दीवस तहाँ नाहीँ, होत साँझ न प्रात ।
कोटिन महँ कोइ जानिहै, नहिँ अवर बूझै बात ॥२७॥
ल–लोक लाज सौँ भाजि करि कै, मिलो हरि कहँ जाय ।
जस मीन जल के अंतरे, तस रहे संत समाय ॥२८॥
व–व्योरु‡ ऊपर नाद अनहद, तहँ उठै झनकार
कोइ प्रेमि बिरहिनि जानिहै, नहिँ अवर जाननहार ॥२९।
स–स्वर्ग-मुख एक सर्प ऊडे़§, रहे सुन्न समाय ।
जो देखिया सो मगन है, नहिँ दूसरो पतियाय ॥३०॥
ष–खोह‖ मेँ एक पर्बतो, तहँ बनो भिन्न अवास¶ ।
संत जन तेहिँ भवन अटके, सुनत अनहद बास ॥३१॥
श--सकल संसय त्यागि के, तुम सेव पुरुष पुरान ।
जिन पाइया वा ब्रह्म को, तिन भयो ऐसो ज्ञान ॥३२॥

*पेड़, वृक्ष। †जरा मरन। ‡आकाश के परे। §स्वर्ग को मुँह किये कुंडलिनी नाड़ी है। ‖कंदरा या घाटी पहाड़ की। ¶जुदा जुदा मंदिर या दीप बने हैं।

ह–हरख भा अभि अंतरे, मन मगन वहँ खिंचि लाग।
विना मूल के फूल फूल्यौ, देखि पटपद जाग* ॥३३॥
क्ष–छाया नाहीं अपनि देखो, अवर के कहु मोर।
जब अभयपुर को परग दीन्हो, छुटो हाथी चोर ॥३४॥

चौंतीस आखर† जोग वरनन, काल कर्म विचार।
धरनिहिं निज प्रभु जानिये, अव राखु सरन मुरार ॥३५॥

(३)

क–करता आदि अंत अविनासी।
करता अगम अगोचर वासी ॥१॥
करता केवल आपहिं आप।
करता के कोउ माय न बाप ॥२॥
ख–खासा होय सो करतहिं जाना।
खाम‡ खलक धंधा लपटाना ॥३॥
खुसी होत धन आवत हाथे।
खाली जात चले नहिं साथे ॥४॥
ग–गुरु के चरन गहो चित लाई।
गुरु सत मारग देत दिखाई ॥५॥
गह्यो जो दृढ़ करि अधर अधारा।
गयो उतरि सो भवजल पारा ॥६॥
घ–घट घट बसे कतहुँ नहिँ सूना।
घाट लखे जेहि पुरबल पूना§ ॥७॥

---

*पटपद भँवरा को कहते हैं यानी भँवरा रूपी मन जागा। †अक्षर।
‡कच्चे यानी झूँठे। §पुन्य।

घट मैं जो आवे बिस्वासा ।
घर मैं बैठे बिलसि बिलासा ॥८॥
उ-उत्तम जनम जगत मैं ता को ।
उरध उलटि चढ़ा मन जा को ॥९॥
उज्जल मनसा हरि ब्रत धारी ।
उन तें कहा कवन अधिकारी ॥१०॥
च-चंचल चित अस्थिर करि राखो ।
चंचल बचन कबहिं जनि भाखो ॥११॥
चारि दिना जगजीवन आथी* ।
चलत बार कोउ संग न साथी ॥१२॥
छ-छिया बुंद पर छबि लपटाई ।
छिया सोई छबि देखि लोभाई ॥१३॥
छित† महँ करि ले राम सनेही ।
छिन यक माहिं छुटेगी देही ॥१४॥
ज-जक्त मांहिं जगदीस पियारा ।
जो बिसरावे सो चंडारा ॥१५॥
जिन जिन जगजीवन ब्रत धारी ।
जरा मरन की संसय टारी ॥१६॥
झ-झगरा करै कथै सघुवाई ।
झाँझरि नाव पार कस जाई ॥१७॥
झूठ कहत जेहिं त्रास न आवै ।
झोरि झोरि जम ताहि झुलावै ॥१८॥

*है । †पृथ्वी, संसार ।

ञ–इंद्री स्वाद रहे अरुझाई ।
इंसुर भक्ति हृदय बिसराई ॥१९॥
इहै प्रमान करो मन माहीं ।
इह अवसर पैहौ पुनि नाहीं ॥२०॥
ट–टहल करो साधू जन केरी ।
टार बार परिहरि* बहुतेरी ॥२२॥
टंडसा तें बाढ़े जंजाला ।
टापा‡ लेइ पुनि छोपै काला ॥२३॥
ठ–ठाकुर एक है सिरजनहारा ।
ठाँव ठाँव दै सबहिं अहारा ॥२४॥
ठाकुर छोड़ि आन मन लावै ।
ठावहिं आपन काज नसावै ॥२५॥
ड–डारी धरि मूलहिं बिसराय ।
डहँकि लोक पाखंडहिं खाय ॥२६॥
डर नहिं आवै ता दिन केरा ।
डोलत अंध बकै बहुतेरा ॥२७॥
ढ–ढोलिया§ साधु सदा संसारा ।
ढाल|| धरो सतसंग उबारा ॥२८॥
ढाल कहाँ होइ रहे बेदानी¶ ।
ढरकि जाइहौ ज्यौं घट पानी ॥२९॥
न–नाम निरंजन करो उचारा ।
नाम एक संसार उबारा ॥३०॥

---

*छोड़ कर । †बाहरी क्रिया यानी दिखावे का काम । ‡जिस से छोप कर मछली मारते हैं । §अपनी ढोल बजाने वाला अर्थात अपनी तारीफ़ करने वाला । ||जिस से तलवार की वार रोकते हैं । ¶बेदांती ।

घट मैँ जो आवे बिस्वासा ।
घर मैँ बैठे बिलसि बिलासा ॥८॥
उ–उत्तम जनम जगत मैँ ता को ।
उरध उलटि चढ़ो मन जा को ॥९॥
उज्ज्वल मनसा हरि ब्रत धारी ।
उन तेँ कहो कवन अधिकारी ॥१०॥
च–चंचल चित अस्थिर करि राखो ।
चंचल वचन कबहिँ जनि भाखो ॥११॥
चारि दिना जगजीवन आथी* ।
चलत बार कोउ संग न साथी ॥१२॥
छ–छिया बुंद पर छबि लपटाई ।
छिया सोई छवि देखि लोभाई ॥१३॥
छित[†] महँ करि ले राम सनेही ।
छिन यक माहिँ छुटेगी देही ॥१४॥
ज–जक्त मांहिँ जगदीस पियारा ।
जो बिसरावे सो चंडारा ॥१५॥
जिन जिन जगजीवन ब्रत धारी ।
जरा मरन की संसय टारी ॥१६॥
झ–झगरा करै कथै सधुवाई ।
झाँझरि नाव पार कस जाई ॥१७॥
झूठ कहत जेहिँ त्रास न आवै ।
झोरि झोरि जम ताहि झुलावै ॥१८॥

*है । [†]पृथ्वी, संसार ।

प--परसुराम अरु बिरमा माई ।
पुत्र जानि जग हेतु बड़ाई ॥४२॥
प्रगटि धरनि ईसुर करि दाया ।
पूरे भाग भक्ति हरि पाया ॥४३॥
फ--फोकट फंद परे नर भूले ।
फिरि फिरि गर्भ अधोमुख झूले ॥४४॥
फेरै अरध उरध लै लावै ।
फिर नाहीं भवसागर आवै ॥४५॥
ब--बहुत गये तरि यही उपाई ।
बहुत रहे यहि दिसि अरुझाई ॥४६॥
बड़े पुन्न भव मानुप दैंही ।
बाद जात बिनु राम सनेही ॥४७॥
भ--भेष बनाय कपट जिय माहीं ।
भवसागर तरिहैं सो नाहीं ॥४८॥
भाग होय जा के सिर पूरा ।
भक्ति काज बिरले जन सूरा ॥४९॥
म--मन गुड्डी गहि गगन चढ़ावै ।
ममता तजि समता उर छावै ॥५०॥
मधुर दीनता लघुता भाखै ।
मन बच कर्म एक ब्रत राखै ॥५१॥
य--युक्ति बिना कोइ मुक्ति न पावैं ।
यैा ब्रह्मंड खंड लगि धावै ॥५२॥

नाम नाव चढ़ि उतरहि दासा ।
नाम विहूने* फिरहिँ उदासा ॥३१॥
त--तारन तरन अवर नहिँ कोई ।
ताहि देखु मूरख नर लोई ॥३२॥
तुलसी पहिरि तमोगुन त्यागे ।
ताके आदि अंत नहिँ खाँगे[†] ॥३३॥
थ--थापन[‡] अथपन[§] थापनहारा[‖] ।
थीर करै मन गगन मँझारा ॥३४॥
थिर भयो मन छूटेव जंजाला ।
थरथर थहरै ता को काला ॥३५॥
द--दुरलभ तन नर देँही पाय ।
दाव इहै हरि भक्ति दृढ़ाय ॥३६॥
देखा देखी मरत अनारी ।
देखु आपने हिये विचारी ॥३७॥
ध--धर्म दया कीजे नर प्रानी ।
ध्यान धनी को धरिये जानी ॥३८॥
धन तन चंचल थिर न रहाई ।
"धरनी" गुरु की करु सेवकाई ॥३९॥
न--नहिँ तामस नहिँ तृस्ना होई ।
नर अवतार देव गन सोई ॥४०॥
निरमल पद गावै दिन राती ।
निरमल सोभै कवनिहुँ जाती ॥४१॥

---

*ख़ाली । [†]घटी । [‡]जिसका स्थापन किया जाता है । [§]जिसका स्थापन नहीं हो सकता । [‖]स्थापन करने वाला यानी सब का करता मन ।

प--परसुराम अरु बिरमा माई ।
पुत्र जानि जग हेतु बड़ाई ॥४२॥
प्रगटि धरनि ईसुर करि दाया ।
पूरे भाग भक्ति हरि पाया ॥४३॥
फ--फोकट फंद परे नर भूले ।
फिरि फिरि गर्भ अधोमुख झूले ॥४४॥
फेरै अरध उरध लै लावै ।
फिर नाहीं भवसागर आवै ॥४५॥
ब--बहुत गये तरि यही उपाई ।
बहुत रहे यहि दिसि अरुझाई ॥४६॥
बड़े पुन्न भव मानुष देँही ।
बाद जात बिनु राम सनेही ॥४७॥
भ--भेष बनाय कपट जिय माहीं ।
भवसागर तरिहैँ सो नाहीं ॥४८॥
भाग होय जा के सिर पूरा ।
भक्ति काज बिरले जन सूरा ॥४९॥
म--मन गुड्डी गहि गगन चढ़ावै ।
ममता तजि समता उर छावै ॥५०॥
मधुर दीनता लघुता भाखै ।
मन बच कर्म एक ब्रत राखै ॥५१॥
य--युक्ति बिना कोइ मुक्ति न पावै ।
यो ब्रह्मंड खंड लगि धावै ॥५२॥

याके* हिय ना भेद समाना ।
यप† तप संयम करि पछितांना ॥५३॥
र--राम नाम सुमिरो रे भाई ।
राम नाम संतन सुखदाई ॥५४॥
राम कहत जम निकट न आवै ।
रिग यजु साम अथर्वन‡ गावै ॥५५॥
ल--लछमी जोरि संग जो लेई ।
लाख उपर दीया जो देई§ ॥ ५६ ॥
लोकचार चाटक‖ दिन चारी ।
लेहु आपनो काज सुधारी ॥ ५७ ॥
व--वा से कहौं सुनो चित लाई ।
वासर¶ गये बहुत पछिताई ॥ ५८ ॥
अवलोकहु** अपने मन माहीं ।
अवर प्रकार अंत सुख नाहीं ॥ ५९ ॥
श--सेत झलाझल झलकै जहाँ ।
सुरति निरति लव लावो तहाँ ॥ ६० ॥
सहजहिं रहो गहो सेवकाई ।
सन्मुख मिलिहै आतमराई ॥ ६१ ॥
ष--खोजत धन नर फिरत बेहाला ।
खबरि न जाने पाछे काला ॥ ६२ ॥
खोटा बहुरि जाय खोटसारा ।
खरा चहूँ दिसि चलन पियारा ॥ ६३ ॥

*जाके । †जप । ‡वेदों के नाम । §अगले ज़माने में लाख रुपये के ख़ज़ाने पर अखंड दीपक बालते थे । ‖चेटक=धोखा । ¶अवसर । **देखो ।

स--सार वस्तु ढूँढ़हु रे भाई ।
साध कि संगति रहा समाई ॥ ६४ ॥
सत मारग विनु मुक्ति न होई ।
साँच सब्द सुनियो सब कोई ॥६५॥
ह--होहु दयाल विसंभर देवा ।
हम नहिँ जानहिँ पूजा सेवा ॥ ६६ ॥
हमरे नहिँ कछु करम निकोई[*] ।
हरि किरपा होई सो होई ॥ ६७ ॥
छ--छोड़हु फाँसी करम गोसाँई ।
छोरि लेहु जम तेँ बरियाई ॥ ६८ ॥
छोटो मति मैँ निपट अनारी ।
छुटे जानि इक नाम तुम्हारी ॥ ६९ ॥

करम ककहरा जग लिपटाना ।
संत ककहरा कोइ कोइ जाना ॥ ७० ॥
जा घट भा अनुभव परगासा ।
तिन की वलि वलि धरनीदासा ॥ ७१ ॥

॥ अलिफ़नाम ॥

अलिफ़--आप अन्दर वसैं, वे--वतलावै दूर ।
ते--तन मैँ तहक़ीक़ कर, अलिफ़ अजाएव नूर ॥ १ ॥
से--सालिस[†] होय समुझि ले, जीम--जहान वसीर[‡] ।
हे--हयात[§] की ख़ाक मैँ, ख़े--आख़िर होत ख़मीर[||] ॥ २ ॥

---

[*]नेक, शुभ । [†]पंच; बिचौलिया । [‡]सुझाका । [§]जीवन, ज़िन्दगी । [||]मेला ।

दाल--दिलहि में दोस्त है, ज़ाल--ज़िकर[*] कर पेश ।
रे--रहीम[†] के राह चढ़, ज़े--ज़िन्दा दरवेश ॥ ३ ॥
सीन--सपेद सुवास गुल, शीन--शिकम[‡] दर माँहि ।
साद--सुरत साबूत है, ज़ाद--ज़मीर फ़राहि[§] ॥ ४ ॥
तो--तालिब[||] दीदार होय, ज़ो--ज़ालिम उठ जाग ।
अैन--अक़ीदा[¶] बाँध ले, ग़ैन--ग़ाफ़िली त्याग ॥ ५ ॥
फ़े--फ़ाज़िल अन्दर पढ़े, क़ाफ़--क़ोरान तमाम ।
काफ़--करे मति काहिली[**], लाम--लेत निज नाम ॥ ६ ॥
मीम--मेरा माशूक़ है, नूँ--नादिर[††] कोइ जान ।
वाव--वोही की फ़िकर में, हे--हर दम रह मस्तान ॥ ७ ॥
लाम--लेहु ठहराय के, अलिफ़--अकेला सोय ।
हमज़ा--ये मुरशिद बिना, धरनी लखै न कोय ॥ ८ ॥

पहाड़ा

एका एक मिलै गुरु पूरा, मूल मंत्र जो पावै ।
सकल संत की बानी बूझै, मन परतीत बढ़ावै ॥१॥
दूआ दुई तजै जो दुविधा, रजगुन तमगुन त्यागै ।
सतगुरु मारग उलटि निरेखै, तब सोवत उठि जागै ॥२॥

---

[*]सुमिरन । [†]दयाल । [‡]पेट । [§]मन की सफ़ाई करो । [||]माँगनेवाला । [¶]प्रतीत । [**]सुस्ती । [††]अनूठा; अचरजी ।

तीया तीन त्रिवेनी संगम, सो विरले जन जाना ।
तृस्ना तामस छोड़ि दे भाई, तब करु वहँ प्रस्थाना ॥३॥
चैाथे चारि चतुर नर सोई, चैाथे पद कहँ लागी ।
हँसि कै परम हिँडोलना झूलै, निरखत भा अनुरागी ॥४॥
पँचयँ पाँच पचीसहिँ बस करि, साँच हिये ठहरावै ।
इँगला पिँगला सुखमन सोधै, गगन मँडल मठ छावै ॥५॥
छठयँ छवो चक्र को बँधे, सुन्न भवन मन लावै ।
बिगसत कमल काया करि परिचै, तब चंदा दरसावै ॥६॥
सतयँ सात सहज धुनि उपजै, सुनि सुनि आनँद बाढ़ै ।
सहजहिँ दीनदयाल दया करि, बूड़त भवजल काढ़ै ॥७॥
अठयँ आठ अकासहिँ निरखो, दृष्टि अलोकन होई ।
बाहर भीतर सर्व निरंतर, अंतर रहै न कोई ॥८॥
नवँ नवो दुवारहिँ निरखै, जगमग जगमग जोती ।
दामिनि दमकै अमृत बरसै, निझर झरै मनि मोती ॥९॥
दसयँ दस दहाइ पाइ कै, पढ़ि ले एक पहारा ।
धरनीदास तासु पद बंदै, अहि निसु बारम्बारा ॥१०॥

बारहमासा

॥ दोहा ॥

चैत चलहु मन मानि कै, जहँ बसै प्रान पियार।
हिलि मिलि पाँच सहेलरी, पंच-पाँच* परिवार ॥१॥

॥ छंद ॥

परिवार जोरि बटोरि लीजे गोरि खोरि† न लाइये।
बहुरि समय सरूप अस ना जानिये कब पाइये ॥२॥

॥ दोहा ॥

बैसाखहिँ बनि ठनि धनी, साजहु सहज सिँगार।
पहिरो प्रेम पटम्बारी, सुनि लो मंत्र हमार ॥३॥

॥ छंद ॥

सुनि लेहु मंत्र हमार सुन्दरि हार पहिरु एकावरी।
छोड़ि मान गुमान ममता अजहुँ समझहु बावरी ॥४॥

॥ दोहा ॥

जेठ जतन करु कामिनी, जन्म अकारथ जाय।
जोबन गरब भुलाहु जनि, कछु करि लेहु उपाय ॥५॥

॥ छंद ॥

करि लेहु कछुक उपाय नाहिँ दुख पाय फिर पछिताइ है।
जब गाँठि को गथ‡ नाठि§ है तब ढूँढ़ते नहिँ पाइ है ॥६॥

॥ दोहा ॥

अजहुँ असाढ़ समुझि चित, यहि दिस हित नहिँ कोय।
अद्भुत अरथ दरब सब, सुपन अपन नहिँ होय ॥७॥

---

*पच्चीस प्रकृति। †भरम। ‡धन=ब्री। §बँधा हुआ। ‖गिर जाना।

॥ छंद ॥

अपन नहिँ कछु सुपन सब सुख, अंत चलिहै। हारिकै ।
मातु पितु परिवार पुनि तोहिं, डारि हैँ परिचारि कै ॥८॥

॥ दोहा ॥

सावन सकुच करहु जनि, धावन* पठवहु चोख† ।
वहुत दिवस लगि भटकियो, अब जनि लावहु धोख ॥९॥

॥ छंद ॥

जनि धोख लावहु चोख धावहु, जो कहावहु पीव की ।
करत कोटि उपाव चिंता, मेटि है नहिँ जीव की ॥१०॥

॥ दोहा ॥

भामिनि भइल जोवन तन, भजि लेहु भादौँ मास ।
पत न रहहि निजु पती विनु, ह्वैहै जग उपहाँस ॥११॥

॥ छंद ॥

होइ है उपहाँस जग मैँ, मान मानन जनि करो ।
समुभि नेह सनेह स्वामी, हरखि लै हिरदै धरो ॥१२॥

॥ दोहा ॥

आसुन‡ विरह विलासिनी, मिलहु [illegible] खोल ।
नाहिँ तौ कंत रिसाइ हैँ, मुख हूँ [illegible] ॥१३॥

॥ छंद ॥

मुख वोलि नहिँ कछु आइ है, [illegible] है घर घर [illegible]
तब कहा कूप खनाइ हौ, [illegible]

*हरकारा । †जल्दी ; [illegible]

॥ दोहा ॥

कातिक कुसल तबहिँ सखी, जबहिँ भजो पिय जानि ।
बहुरि बिछोह कबहुँ नहीं, ह्वैहै जुग जुग रानि ॥१५॥

॥ छंद ॥

जुग रानि ह्वैहै जानि जिय धरि, दानि* कोइ न दूसरो।
हित सारि† खेत बिसारि अपनो, बीज डारत ऊसरो ॥१६॥

॥ दोहा ॥

अगहन उत्तर दिये सखि, हम अबला‡ अवतार ।
जतन करत ना बनत कछु, कठिन कुटिल संसार ॥१७॥

॥ छंद ॥

कुटिल यह संसार, बरु§ जरि जाइ जोबन ऐसहीं ।
निज कंत जो अपनाइ हैँ, चलि आइ हैँ घर वैसहीं ॥१८॥

॥ दोहा ॥

पूस पलटि प्रभु आयऊ, प्रगटेव परम अनंद ।
घर घर सगर|| नगर सुखी, मिटेव दुसह दुख दुंद ॥१९॥

॥ छंद ॥

दुख दुंद मेटेव चन्द भैँटेव, फंद सबन छुटाइया ।
पुलकि¶ बारम्बार ह्वै, परिवार मंगल गाइया ॥२०॥

॥ दोहा ॥

माघ मुदित मन छिनहिँ छिन, दिन दिन बढ़त सोहाग ।
नैहर भरम भटकि गयो, सासुर संक** न लाग ॥२१॥

॥ छंद ॥

नहिँ लागु सासुर संक हे सखि, रंक जनु राजा भयो ।
निज नाह†† मिलियो बाँह ग्रिव‡‡ दै, सकल कलमख दुरि गयो२२

---

*दानी, दाता । †अच्छा, उपजाऊ । ‡स्त्री । §चाहे । सब । ¶मगन ।
**शंका, डर । ††पति । ‡‡गर्दन में ।

॥ दोहा ॥

फागुन फरयो अमी फल, झरयो सकल दुख पात ।
निसु दिन रहत मगन मन, सो मुख कह्यो न जात ॥२३॥

॥ छंद ॥

कहि जात नहिं मुख ताहि मूरति, सुरति जहँ ठहराइया ।
सुनि बिमल बारह मास को, गुन दास धरनी गाइया ॥२४॥

बोध लीला ।

प्रथमहिं बरनौं एकै करता । आदि अंत मधि भरता हरता॥१
तब बंदौं सतगुरु के पाँव । परस जो सोवत जीव जगावँ॥२
तब पुनि सकल साधु सिर नावौं । जा की दया अमय पद पावौं३
स्रवनन्ह सुनी संत की बानी । तब पुनि बेद पुरान कहानी॥४॥
संसकार सतसंगति पाई । तब यह जग मिथ्या ठहराई ॥५॥
जित देखा इस्थित नहिं कोई । सो इस्थित जा तें सब होई॥६
संसा करि संसार भुलाना । सो सब हृदय कियो अनुमाना॥७
जस सपने सुख संपति पावे । जागे काज कछू नहिं आवे॥८
मरकट मुट्ठी छोड़ि न देई । बिनु बंधन तन बंधन लेई ॥९॥
नाभि सुगंध नासिका बासा । चरचत* फिरे चहूँ दिस घासा१०
दूजा देखो दरपन माहीं । छबि जनु एक बहुरि कछु नाहीं११
नलनी बैठि सुगा जिमि भूला । भरमत अंध अधोमुख झूला१२
जल महँ प्रतिमा देखलावे । खोजत बिनसे हाथ न आवे१३

---

*ढूँढ़ता ।

अपनी देँह घुमावन वारा* । घूमत कहे सकल संसारा ॥१४
जानत जँवरि† सरप अंधारे । निरजिव होत सो दीपक वारे१५
तृन को मानुष खेत मँझारा । मृग तेहि मद्ध चरै नहिँ चारा॥१६
फटिक सिला अरुझे मै मता‡ । अपनी कुबुधि गँवायो दंता१७
देखत खाल गऊ गरवानी । हेतु करे अपनो सुत जानी ॥१८
अस्थिर आपु नावरी माहीँ । जानत थ्रवर चले सब जाहीँ१९
भूँसत स्वान काँचु के ग्रेहा । मन अभिमान बिसारे देँहा ॥२०
मृग-तृसना जल धोखे धावे । थाकि परे पाछे पछितावे ॥२१॥
मानुष जन्म जुआ मेँ हारे । हरि भक्ती नहिँ हृदय बिचारे॥२२
उदय अस्त जहाँ लगि देखा । सत्त आतमा राम बिसेखा॥२३
एकै बीज वृच्छ होए आया । खोजत काहु अंत नहिँ पाया२४
देखो निरखि परखि सब कोई । सब फल माहिँ बीज एक होई ॥२५॥
पुरइन ज्योँ जल मध्य अकासा । एकै ब्रह्म सकल घट बासा२६
मनि-गन माल मध्य जिमि डोरा । सागर एक अनेक हिलोरा२७
एक भँवर सब फूल मँझारा । एक दीप सब घर उँजियारा॥२८
तत्तु निरंजन सब के संगा । पसु पंछी नर कीट पतंगा ॥२९॥
देखो आपन कया बिलोई । वाद विवाद करे मति कोई ॥३०॥
काम क्रोध मद लोभ नेवारे । समता गहि ममता को मारे३१
आन के दोस कबहुँ नहिँ धरई । जानत जीव के घात न करई३२
निरपच्छी साँचहि अस्थावे§ । निरदावा धन मृथा न खावे३३
संतत धर्म अनासृत करई । सो प्रानी भवसागर तरई ॥३४॥
दुख सुख एकै भ व जनावे । अभिअंतर बिस्वास बढ़ावे॥३५

*बेर; समय । †रस्सी । ‡मदांध हाथी । §ठराहवे; गहे ।

अस्तुति निंदा दुवो समाना । सुरनर मुनि गन ताहि बखाना३६
तेहि समान तुले नहिँ कोई । जीवन-मुक्त कहावे सोई ॥३७॥
मन परमोध जाहि मन भावे । त्रिविधि पाप तन ताप नसावे३८
चित्रगुप्त धरमाधी राजा । काल दूत जम आरति साजा ३९
अपनो आपा आपु मिटाई । धरनीदास तासु बलि जाई ४०
ऐसी दसा विराजी जा की । धरनी तहँ न रही कछु बाकी४१

॥ साखी ॥

॥ गुरु ॥

धरनी जहँ लगि देखिये, तहँ लौं सबै भिखारि ।
दाता केवल सतगुरू, देत न मानै हारि ॥१॥
धरनी यह मन मृग भयो, गुरू भये ज्यौं ब्याध ।
बान सब्द हिये चुभि गयो, दरसन पाये साध ॥२॥
धरनि फिरहिँ देसंतरो, धरि धरि के बहु भेस ।
कोई कोई देखिहै, अंतर गुरु उपदेस ॥३॥
धूवाँ कै धवरेहरा* औ धूरी को धाम ।
ऐसे जीवन जगत मैं, बिनु गुरु बिनु हरि नाम ॥४॥
धरनी सब दिन सुदिन है, कबहुँ कुदिन है नाहिँ ।
लाभ चहूँ दिसि चौगुनो, (जो) गुरु सुमिरन हिये माहिँ ॥५॥

॥ चेतावनी ॥

धरनी धरि रहु हरि ब्रतहिँ, परिहरि सबही मोह ।
धन सुत बंधु बिभव† जत, होवे अंत बिछोह ॥६॥

---

*ऊँचा घर । †ऐश्वर्य ।

धरनी धोख न लाइये, कवहीँ अपनी ओर ।
प्रभु सोँ प्रीति निबाहिये, जीवन है जग थोर ॥७॥
गोरिया गरव करहु जनि, अपने गोरे गात ।
काल्हि परोँ चलि जाइ है, जैसे पियरे पात ॥८॥
धरनी चहुँ दिसि चरचिया*, करि करि वहुत पुकार ।
नाहीँ हम हैँ काहु के, नाहीँ कोउ हमार ॥९॥

॥ विरह और प्रेम ॥

धरनी धन वो विरहनी, धारै नाहीँ धीर ।
विहवल बिकल सदा चित, दुर्वल दुखित सरीर ॥१०॥
धरनी परवत पर पिया, चढ़ते वहुत डेराँव ।
कवहुँक पाँव जु डिगमिगै, पावाँ कतहुँ न ठाँव ॥११॥
धरनी धरकत है हिया, करकत आहि करेज ।
ढरकत लोचन भरि भरी, पीया नाहिन सेज ॥१२॥
धरनी धवल† धरेहरहिँ, चढ़ि चढ़ि चहुँ दिसि हेर ।
आवत पिय नहिँ दीखतो, भइली वहुत अबेर ॥१३॥
धरनी सो दिन धन्न है, मिलव जवै हम नाह‡ ।
संग पौँढ़ि सुख विलसिहौँ, सिर तर धरि के वाँह ॥१४॥
धरनी धन की भूल हो, कछू वरनि नहिँ जाय ।
सनमुख रहती रैन दिन, मिलत नहीँ पिय धाय ॥१५॥
धरनी पलक परै नहीँ, पिय की झलक सोहाय ।
पुनि पुनि पीवत परम रस, तवहूँ प्यास न जाय ॥१६॥
धरनी धन तन जिवन यह, चाहे रहै कि जाय ।
हरि के चरनहिँ हृदय धरि, अव तो हेत वढ़ाय ॥१७॥

*ढूंढ़ा । †सफ़ेद । ‡पति ।

धरनी सो धन धन्य हो, धन धन कुल उँजियार ।
जा कर बाँह धइल पिया, आपन हाथ पसार ॥१८॥
धरनी पिय जिन पावल, मेटि गइल सब द्वंद ।
अरध उरध सुर गावल, हिरदय होय अनंद ॥१९॥
धरनी खेती भक्ति की, उपजे होत निहाल ।
खर्चे खाय निबरै नहिं, परै न दुक्ख दुकाल ॥ २० ॥
धरनी मन मिलबो कहा, जो तनिक माहिं बिलगाय ।
मन को मिलन सराहिये, जो एक मैं इक होइ जाय ॥ २१ ॥

॥ तत्व वस्तु ॥

तेरे मन मैं तत्व है, तो अनते कित धाव ।
धरनी गुरु उपदेस लै, घरहिं माहिं घर छाव ॥ २२ ॥
अर्ध कँवल के ऊपरे, तहाँ दुवादस एक ।
धरनी भैाजल बूड़ते, गुरु गम पकरी टेक ॥ २३ ॥
दिया दिया घर भीतरे*, बाती तेल न आगि ।
धरनी मन बच कर्मना, ता सोँ रहना लागि ॥ २४ ॥
बिनु पगु निरत करो तहाँ, बिनु कर दैदै तारि ।
बिनु नैनन छबि देखना, बिनु सरवन झनकारि ॥ २५ ॥
दैँह देवखरा भीतरे, मूरति जोति अनूप ।
मोती अच्छत चढ़तु है, धरनी सहज सरूप ॥ २६ ॥
धरनी अरध उरध चढ़ि, उदयो जोति सरूप ।
देखु मनोहर मूरती, अतिहीं रूप अनूप ॥२७॥
बहुत दुवारे सेवना , बहुत भावना कीन्ह ।
धरनी मन संसय मिटी, तत्व परो जब चीन्ह ॥ २८ ॥

*अंतर में दीपक धरा है।

धरनी चहुँ दिसि दौरियो, जहँ लोँ मन की दौर ।
एक आतमा तत्व विनु, अनत न पाई ठौर ॥ २९ ॥
तब लगि प्रगट पुकारिया, जब लगि निवरी नाहिँ ।
धरनी जब निवरी परी, मन की मनहीँ माहिँ ॥ ३० ॥
धरनी हृदय पलंगरी, प्रीतम पैाढ़े आय ।
समा सुनी जो स्रवन तेँ, कहे कवन पतियाय ॥ ३१ ॥
धरनी तन मेँ तख्त है, ता ऊपर सुलतान ।
लेत मोजरा सबहिँ को, जहँ लैाँ जीव जहान ॥ ३२ ॥
विनु अच्छर के अच्छरा, विनु लिखनी का लेख ।
विनु जिभ्या का बाँचना, धरनी लखा अलेख ॥ ३३ ॥
लिखि लिखि सिखि सिखि का भयो, पढ़ि गुनि गाय बजाय
धरनी मूरति मोहिनी, जैाँ लगि हिये न समाय ॥ ३४ ॥
अच्छर सब घट उच्चरै, जेते जिव संसार ।
लागि निरच्छर जो रहे, ता अच्छर टकसार ॥ ३५ ॥

॥ ध्यान ॥

धरनी ध्यान तहाँ धरो, उलटि पसारो दृष्टि ।
सहज सुभावहिँ होत जहँ, पुहुप माल की वृष्टि ॥ ३६ ॥
धरनी ध्यान तहाँ धरो, जहवाँ खुलहि किवार ।
निरखि निरखि परखत रहो, पल पल बारम्बार ॥३७॥
धरनी ध्यान तहाँ धरो, प्रगट जोति फहराहि ।
मनि मानिक मोती झरै, चुगि चुगि हंस अघाहि ॥ ३८ ॥
धरनी ध्यान तहाँ धरो, त्रिकुटी कुटी मँझार ।
घर के बाहर अधर है, सनमुख सिरजनहार ॥ ३९ ॥

धरनी अधरे ध्यान धरु, निसिवासर लै लाइ ।
कर्म काँच मगु बीच है, (सो) कंचन गच ह्वै जाइ ॥ ४० ॥

॥ आरती ॥

धरनी प्रभु की आरती, करिये बारंबार ।
ऊठत बैठत सोवते, अह निसि साँझ सकार ॥ ४१ ॥
साँझ समय कर जोरि कै, उभै* घरी जस गाव ।
धरनी दास सुचित्त† ह्वै, गुरु भक्तन सिरनाव ॥ ४२ ॥

॥ बिनती ॥

धरनी जन की बीनती, करु करुनामय कान ।
दीजै दरसन आपनो, माँगों कछु नहिं आन ॥ ४३ ॥
धरनी बिलखि‡ बिनती करै, सुनिये प्रभू हमार ।
सब अपराध छिमा करो, मैं हौं सरन तिहार ॥४४॥
धरनी सरनी रावरी, राम गरीब-नेवाज ।
कवन करैगा दूसरो, मोहिं गरीब के काज ॥ ४५ ॥
काहू के बहु बिभव भइ, काहू बहु परिवार ।
धरनी कहत हमहिं बल, ए हो राम तुम्हार ॥४६॥
बार बार संसार मैं, धरनी लागत चोट ।
अब पकरो परतच्छ ह्वै, राम नाम की ओट ॥ ४७ ॥
तिनुका दाँत के अंतरे, कर जोरे भुइँ सीस ।
धरनी जन बिनती करै, जानु§ परो जगदीस ॥ ४८ ॥

*दो । †एकचित । ‡रोकर । §जाँघ, घरन ।

धरनी नहिँ वैराग बल, नाहिँ जोग सन्यास ॥
मनसा बाचा कर्मना, विस्वंभर त्रिस्वास ॥ ४९ ॥
बिनती लीजे मानि करि, जानि दास को दास।
धरनी सरनी राखिये, अवर न दूसर आस ॥ ५० ॥

॥ ब्राह्मण ॥

धरनी भरमी बाम्हने, बसहिँ भरम के देस।
करम चढ़ावहिँ आपु सिर, अवर जे ले उपदेस ॥५१॥
करनी पार उतारिहै, धरनी किये। पुकार।
साकित बाम्हन नहिँ भला, भक्ता भला चमार ॥५२॥
मास अहारी बाम्हना, सो पापी वहि जाउ।
धरनी सूद्र बइस्नवा, ताहि चरन सिर नाउ ॥५३॥

॥ भेष ॥

कुल तजि भेष बनाइया, हिये न आये। साँच।
धरनी प्रभु रीझै नहीँ, देखत ऐसो नाच ॥५४॥
भेष लिये दाया नहीँ, ध्यान धतूरा भाँग।
धरनी प्रभु काँचा नहीँ, जो भूलत ऐसे स्वाँग ॥५५॥

॥ नारी ॥

नारी बटमारो करै, चारि चैाहटे माहिँ।
जो वोहि मारग होइ चले, धरनी निबहे नाहिँ ॥५६॥
दामिनी ऐसी कामिनी, फाँसी ऐसो दाम।
धरनी दुइ तेँ बाचिये, कृपा करै जो राम ॥५७॥
धरनी ब्याही छोड़िये, जो हरिजन देखि लजाय।
बेस्या संग विराजिये, जो भक्ति अंग ठहराय ॥५८॥

॥ निश्रित ॥

धरनी काहि असीसिए, औ दीजै काहि सराप ।
दूजा कतहुँ न देखिये, सब घट आपै आप ॥५९॥
धरनी कथनी लोक की, ज्यौं गीदर को ज्ञान ।
आगम भाखै और के, आपु परे मुख स्वान ॥६०॥
धरनी सो पंडित नहीं, जो पढ़ि गुन कथै बनाय ।
पंडित ताहि सराहिये, जो पढ़ा बिसारि सब जाय ॥६१॥
धरनी कागद फारिकै, कलम पवारै* दूर ।
कया कचहरी पैठिकै, बैठा रहै हजूर ॥६२॥
धरनी कोउ निंदा करै, तू अस्तुति करु ताहि ।
तुरत तमासा देखिये, इहै साधु मत आहि ॥६३॥
धरनी जिव जनि मारियो, माँसहिं नाहीं खाहु ।
नंगे पाँव बबूर बन, होइ नाहिं निरबाहु ॥६४॥
माँस अहारी जीयरा, सो पुनि कथै गियान ।
नाँगी होय घूँघट करै, धरनी देखि लजान ॥६५॥
धरनी यह मन जम्बुका,† बहुत कुभोजन खात ।
साधु संग मृग होइ रहु, सब्द सुगंध बसात ॥६६॥
धरनी बाहर धुंधरो, भीतर ऊगो चंद ।
भयो भले को अति भलो, है मंदे को मंद ॥६७॥
बिष लागे दुनिया मरै, अमृत लागे साध ।
धरनी ऐसो जानिहै, जाको मता अगाध ॥६८॥

॥ शब्द ॥

धरनी सब्द प्रतीत बिनु, कैसहु कारज नाहिं ।
सब्द सिढ़ी बिनु को चढ़ै, गगन झरोखा माहिं ॥६९॥

---

*डाले । †स्यार ।

सब्द सब्द सब कोइ करै, धरनी कियो विचार ।
जो लागे निज सब्द को, ता को मता अपार ॥७०॥
सब्द सकल घट ऊचरे, धरनी बहुत प्रकार ।
जो जाने निज सब्द को, तासु सब्द टकसार ॥७१॥
धरनी धरम अरु करम कै, कलि मेँ कछू न काम ।
मनसा वाचा करमना, भजिये केवल नाम ॥७२॥
परमारथ को पंथ चहि, करते करम किसान ।
ज्योँ घर मेँ घोड़ा अछत, गदहा करै पलान ॥ ७४ ॥
धरनी आपन मरम हो, कहिये नाहीँ काहि ।
जाननहार सो जानिहै, जैसो जो कछु आहि ॥ ७५ ॥

पाठक महाशयों की सेवा में प्रार्थना है कि इस पुस्तक-माला के जो दोष उन की दृष्टि में आवैं उन्हें हमको कृपा करके लिख भेजें जिस में वह दूसरे छापे में दूर कर दिये जावैं और जो दुर्लभ ग्रंथ संतबानी के उन को मिलें उन्हें भेज कर इस परोपकार के काम में सहायता करें।

यद्यपि ऊपर लिखे हुए कारनों से इन पुस्तकों के छापने में बहुत ख़र्च होता है तौ भी सर्व साधारन के उपकार हेतु दाम आध आना फ़ी आठ पृष्ठ से अधिक किसी का नहीं रक्खा गया है। जो लोग मस्तक़िल अर्थात पक्के गाहक होकर कुछ पेशगी जमा कर देंगे जिस की तादाद दो रुपये से कम न हो उन्हें एक चौथाई कम दाम पर जो पुस्तकें आगे छपैंगी बिना माँगे भेज दी जायँगी यानी रुपये में चार आना छोड़ दिया जायगा परंतु डाक महसूल उन के ज़िम्मे होगा और पेशगी दाम न देने की हालत में वी० पी० कमिशन भी उन्हें देना पड़ेगा। जो पुस्तकें अब तक छप गई हैं (जिन के नाम आगे लिखे हैं) सब एक साथ लेने से भी पक्के गाहकों के लिये दाम में एक चौथाई की कमी कर दी जायगी पर डाक महसूल और वी० पी० कमिशन लिया जायगा।

प्रोप्रैटर, बेलवेडियर छापाख़ाना,

अपरैल, १९११ ई०

इलाहाबाद।

संतबानी पुस्तक-माला

तुलसी साहब (हाथरस वाले) की शब्दावली और जीवन-चरित्र ... २)
" " " रत्न सागर मय जीवन-चरित्र .. ।।।=)
ग़रीबदास जी की बानी और जीवन-चरित्र ... ... ।।।=)
कबीर साहब की शब्दावली और जीवन-चरित्र, भाग १ दूसरा एडिशन ॥)
" " शब्दावली भाग २ ... ... ॥=)
" " ज्ञान-गुदड़ी व रेख़ते ... ... ≡)
" " अखरावती ... ... -)
पलटू साहब की शब्दावली (कुंडलिया इत्यादि) और जीवन-चरित्र,
भाग १ ... ... ॥)
" " भाग २ ... ... ।-)॥
धरनदासजी की बानी और जीवन-चरित्र, भाग १ .. ॥)॥
" " " " भाग २ ... ।≡)॥
रैदासजी की बानी और जीवन-चरित्र ... ... ।-)॥
जगजीवन साहब की बानी और जीवन-चरित्र, भाग १ ... ॥-)
दरिया साहब (बिहार वाले) का दरियासागर और जीवन-चरित्र ।-)
दरिया साहब (मारवाड़ वाले) की बानी और जीवन-चरित्र ... ।)॥
भीखा साहब की शब्दावली और जीवन-चरित्र ... ... ।≡)
गुलाल साहब (भीखा साहब के गुरू) की बानी और जीवन-चरित्र ॥-)॥
मीरा बाई की शब्दावली और जीवन-चरित्र ... ... ।-)
सहजो बाई की बानी और जीवन-चरित्र ... ... ।)
दया बाई की बानी और जीवन-चरित्र ... ... =)॥
गुसाँई तुलसीदासजी की बारहमासी ... ...)॥
यारी साहब की रत्नावली मय जीवन-चरित्र ... ... -)॥
बुल्ला साहब का शब्दसार और जीवन-चरित्र ... ... =)॥
केशवदासजी की अमीघूंट मय जीवन-चरित्र ... ... -)
धरनीदासजी की बानी और जीवन-चरित्र ... ... ।)
अहिल्याबाई का जीवन-चरित्र अँग्रेज़ी पद्य में ... ... =)

मूल्य में डाक महसूल व वाल्यू पेअबल कमिशन शामिल नहीं है ।

मनेजर, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद ।